HISTORY OF HINDI LANGUAGE

Study material

VI SEMESTER

B.A HINDI

CORE COURSE
(2011 ADMISSION)

UNIVERSITY OF CALICUT
SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION
THENJIPALAM, CALICUT UNIVERSITY P.O., MALAPPURAM, KERALA - 693 635

183

UNIVERSITY OF CALICUT
SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION

Study material

VI SEMESTER

B.A HINDI

CORE COURSE
HISTORY OF HINDI LANGUAGE

Prepared by

DR.MINI.E.
ASST.PROFESSSOR
DEPT. OF HINDI
GOVT. ARTS & SCIENCE COLLEGE, KOZHIKODE

Scrutinised by :

Dr. PAVOOR SASHEENDRAN (Retd.)
38/1294, APPUGHAR,
EDAKKAD P.O.,
CALICUT

Type settings & Lay out
Computer Section, SDE

©
Reserved

INDEX

1.	भाषा की परिभाषा	5
2.	विश्व की भाषाएँ	12
3	भारतीय आर्य भाषाएँ	26
4	हिन्दी नाम और उसके विभिन्न रूप	40
5	लिपि	46

Module-1

भाषा की परिभाषा

भाषा विचारों के आदान प्रदान का माध्यम होता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह विचारों के विनिमय के लिए कई मार्ग अपनाता है। भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं। भाषा की अनेक परिभाषाएँ दी गई हैं।

1. भाषा शब्द संस्कृत की भाष धातु से बना है जिसका अर्थ है- बोलना या कहना। अर्थात 'भाषा वह है जिसे बोला जाय।
2. प्लेटो के अनुसार "विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होंठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।
3. स्वीट के अनुसार 'ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।
4. ए. एच गार्डिनर का कहना है कि विचारों की अभिव्यक्ति के लिए जिन व्यक्त एवं स्पष्ट ध्वनि संकेतों का व्यवहार किया जाता है, उन्हें भाषा कहते हैं।

अधिकांश विद्वानों ने भाषा की परिभाषा एक समान दी है। इन से भाषा के बारे में निम्न बातें सामने आती है।

1. भाषा विचार विनिमय का साधन है।
2. भाषा मनुष्य के उच्चारण अवयवों से निकलती हैं
3. भाषा ध्वनियों का समूह या ध्वनि समष्टि होती है।
4. भाषा में प्रयुक्त ध्वनि समष्टियाँ सार्थक होती है।
5. भाषा एक व्यवस्था होती है। उसके अपने नियम होते हैं जिससे उस भाषा के सभी बोलने वाले परिचित होते है।
6. भाषा का प्रयोग समाज विशेष में होता है और उसी में वह बोली और समझी जाती है।

उपर्युक्त सभी विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए भाषा की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है।

- भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा समाज- विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान प्रदान करते है।

भाषा की विशेषताएँ या अभिलक्षण

मनुष्य की भाषा अन्य सभी जीवों की भाषा से भिन्न है। उसके अपने कुछ ऐसे अभिलक्षण है जो अन्य जीव-जन्तुओं की भाषा से अलग है। मुख्य अभिलक्षण निम्नलिखित है।

1. यादृच्छिकता- यादृच्छिक का अर्थ है जैसी इच्छा हो या माना हुआ हो। भाषा में किसी वस्तु या भाव का किसी शब्द से सहज स्वाभाविक या तर्कपूर्ण संबंध नहीं है, वह समाज के इच्छानुसार माना हुआ संबंध है। यदि सहज-स्वाभाविक सम्बन्ध होता तो सभी भाषाओं में एक वस्तु के लिए एक ही शब्द होता।

2. सृजनात्मकता- भाषा में आवश्यकतानुसार नित्य नए नए शब्द और प्रयोगों का सृजन होता है। इस अभिलक्षण को उत्पादकता भी कहा गया है।

3. अनुकरणग्राह्यता- भाषा समाज विशेष से अनुकरण द्वारा सीखी जाती है। कोई भी मनुष्य जन्म से कोई भाषा सीखकर नहीं आता। एक बच्चा अनुकरण द्वारा ही अपनी माँ या अन्य व्यक्तियों से भाषा सीखता है। अनुकरणग्राह्यता के कारण ही मनुष्य अपनी भाषा के अतिरिक्त अन्य अनेक भाषाएँ सीखता है।

   इस अभिलक्षण को कुछ अन्य नामों से भी पुकारा गया है। सांस्कृतिक प्रेषणीयता (Cultural transmission), परम्परानुगामिता (Conventionality), अधिगम्यता (Learnability) आदि।

4. परिवर्तनशीलता- मानव भाषा चिर परिवर्तनशील है। इस परिवर्तन का मुख्य कारण अनुकरण द्वारा ग्रहण करने की क्षमता ही है।

5. विविक्तता- मानव भाषा का स्वरूप ऐसा नहीं है जो पूर्ण रूप से एक हो। वह वस्तुतः कई घटकों या इकाइयों में बँटी है। जैसे वाक्य एकाधिक शब्दों से बनता है तथा शब्द एकाधिक ध्वनियों से। यह बहुघटकता, विछिन्नता, विविक्तता या कई इकाइयों से विभाज्यता अन्य जीवों की भाषा में नहीं मिलती।

6. द्वैतता- भाषा में उच्चारणया वाक्य रचना के दो स्तर होते हैं। यह भाषा की अभिरचना की द्वैतता है। अर्थात भाषा में एक साथ दो स्तरों पर अभिरचनाएँ होती है। अर्थद्योतक या विचारद्योतक ।

7. अंतरणता- मानव भाषा वर्तमान में प्रयुक्त होते हुए भी भूत या भविष्य के विषय में कहने में समर्थ है। मानव भाषा स्थानांतरण भी कर सकती है अर्थात एक स्थान में प्रयुक्त होते हुए किसी अन्य स्थान की सूचना दे सकती है।

8. मौखिकता-श्रव्यता - मानव भाषा मुँह से कही और कान से सुनी जाती है इस तरह वह मौखिक-श्रव्य सारणि का प्रयोग करती है। भाषा की लिखित पठिक सारणि मूलतः इसी पर आधारित होती है।

उपर्युक्त सभी अभिलक्षण मानव भाषा में ही मिलते हैं। ये ही मानव भाषा को मानवेतर भाषा से अलगाते है।

भाषा के विविध रूप

भाषा व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक रूपों में उसके साथ रहकर अपनी सामाजिकता की सार्थकता सिद्ध करती है। मुख्यतः इतिहास, भूगोल (क्षेत्र) प्रयोग, निर्माण, मानकता मिश्रण इन छः आधारों पर भाषा के अनेक रूप होते हैं।

1. मूल भाषा- भाषा का यह भेद इतिहास पर आधारित है। भाषा की उत्पत्ति अत्यन्त प्राचीन काल में उन स्थानों में हुई होगी जहाँ बहुत से लोग एक साथ लगे रहे होंगे। ऐसे स्थानों में किसी एक स्थान की भाषा जो आरंभ में उत्पन्न हुई होगी और आगे चलकर जिससे ऐतिहासिक और भौगोलिक आदि कारणों से अनेक भाषाएँ, बोलियाँ तथा उपबोलियाँ आदि बनी होगी, मूल भाषा कही जाएगी।

2. व्यक्ति बोली (ideolect) - भाषा को उच्चरित करने वाला व्यक्ति होता है, हर व्यक्ति का उच्चारण और भाषिक प्रयोग उसकी, आदतो, ज्ञान, क्षमता और रुचियों पर निर्भर करता है। अतः व्यक्ति के व्यक्तित्व के अनुरूप उसका भाषिक प्रयोग होता है। भाषा का वह रूप जो व्यक्ति विशेष से संबंधित होता है उसे व्यक्तिबोली कहते है। एक दृष्टि से भाषा का यह संकीर्णतम या लघुतम रूप है।

3. उपबोली या स्थानीय बोली (Sub dialect or Local dialect) भाषा का यह रूप भूगोल पर आधारित है। एक छोटे से क्षेत्र में इसका प्रयोग होता है। यह बहुत सी व्यक्ति बोलियों का सामूहिक रूप है। अर्थात किसी छोटे क्षेत्र की ऐसी व्यक्ति बोलियों का सामूहिक रूप, जिनमें आपस में कोई स्पष्ट अन्तर न हो, स्थानीय बोली या उपबोली कहलाता है।

उपबोली की विशेषताएँ

1. उपबोली स्थानीय बोली होती है।
2. व्यक्ति बोलियों का समूह होता है।
3. व्यक्ति बोलियों के समान तत्व इसमें निहित होती हैं।
4. उपबोली बोलने वालों में परस्पर घनिष्ठता का तत्व अधिक होता है।
5. भाषा तथा बोली में जो अन्तर तथा समानता होती है वही अन्तर तथा समानता उसकी बोली तथा उपबोली में होती है।

4. बोली- बहुत सी मिलती जुलती उपबोलियों का सामूहिक रूप बोली है। एक बोली के अंतर्गत कई उपबोलियों होती है। किसी बोली के वर्णन में जब हम उसके दक्षिणी पश्चिमी, मध्यवर्ती आदि उपरूपों की बात करते हैं तो हमारा आशय उपबोली या स्थानीय बोली से ही होता है। कुछ हिन्दी के भाषा विज्ञानविद् बोली के लिए विभाषा, उपभाषा या प्रान्तीय भाषा कहते हैं। बोली किसी भाषा के एक ऐसे सीमित क्षेत्रीय रूप को कहते हैं जो ध्वनि, रूप वाक्य गठन, अर्थ, शब्द समूह तथा मुहावरे आदि की दृष्टि से उस भाषा के परिनिष्ठित तथा अन्य क्षेत्रीय रूपों से भिन्न रूपों के बोलने वाले उसे समझ न सकें तथा जिसके अपने क्षेत्र में कहीं भी बोलने वालों के उच्चारण, रूप रचना, वाक्य गठन, अर्थ शब्द समूह तथा मुहावरों आदि में कोई बहुत स्पष्ट और महत्वपूर्ण भिन्नता होती है।

5. भाषा- मिलती जुलती बोलियों का सामूहिक रूप भाषा है। एक भाषा के अंतर्गत कई बोलियाँ होती है। भाषा का क्षेत्र अपेक्षाकृत बडा होता है। भाषा को साहित्य, धर्म, व्यापार या राजनीति के कारण महत्व प्राप्त होता है।

6. मानक भाषा, परिनिष्ठित भाषा, टकसाली भाषा, आदर्श भाषा (Standard language)

सभ्यता के विकसित होने पर यह आवश्यक हो जाता है कि एक भाषा क्षेत्र की कोई एक बोली मानक मान ली जाय और पूरे क्षेत्र से संबंधित कार्यों के लिए उसका प्रयोग हो। उसे मानक या परिनिष्ठित भाषा कहा जाता है और वह पूरे क्षेत्र के लोगों की शिक्षा, पत्रव्यवहार या समाचार- पत्रादि की भाषा हो जाती है।

एक बोली जब मानक बनती है तो आस-पास की बोलियों पर उसका प्रभाव पडता है। आज की खडी बोली ने ब्रज अवधी भोजपुरी सभी को प्रभावित किया है। कभी कभी ये आस पास की बोलियों को पूर्णतः समाप्त कर देती है। रोम की लैटिन जब इटली की मानक भाषा बनी तो आस-पास की बोलयाँ समाप्त हो गई।

मानक भाषा पर प्रादेशिक बोलियों का प्रभाव पडता है। अतः मानक भाषा के प्रादेशिक रूप होते है साथ ही इसके लिखित और मौखिक रूप भी होते हैं। मौखिक रूप अपेक्षाकृत सुसंस्कृत होता है इसमें प्रादेशिकता की छाप कम होती है।

7. संपर्क भाषा (Link language आन्तर भाषा)

जब विविध जातियों, वर्गों, क्षेत्रों तथा भिन्न भाषा-भाषी क्षेत्रों के लोग विचार-विनिमय हेतु किसी एक भाषा विशेष का प्रयोग करते हैं, तब वह प्रयुक्त होने वाली भाषा संपर्क भाषा कहलाती है।

8. राजभाषा (Official language)

प्रशासन की भाषा राजभाषा कहलाती है। अतः सरकारी कार्यालयों में जिस भाषा का प्रयोग होता है तथा राज्य सरकारें जिस भाषा में अपने पत्र आदि केन्द्र सरकार को तथा केन्द्रीय प्रशासन अपने संदेश राज्य सरकारों को प्रेषित करता है वह राजभाषा कही जाती है। प्रशासन तथा न्याय की भाषा होने के कारण सरकारी दृष्टि से राजभाषा का बहुत अधिक महत्व है। हिन्दी भारत की राजभाषा है। अधिकांश राज्यों में वहाँ की मातृभाषा राजभाषा है।

9. राष्ट्रभाषा (National language)

जब कोई बोली आदर्श भाषा बनने के बाद भी उन्नत होकर और भी उन्नत और महत्वपूर्ण बन जाती है तथा पूरे देश में अन्य भाषा क्षेत्र तथा अन्य भाषा परिवार क्षेत्र में भी उसका प्रयोग सार्वजनिक कामों आदि में होने लगता है तो वह राष्ट्रभाषा का पद पा जाती है। भारत के संविधान के अनुसार इक्कीस भाषाएँ राष्ट्रभाषा की सूची में है।

10. गुप्त भाषा या कूट भाषा (Code language)

किसी विशिष्ट मंतव्य को गोप्य रखने के लिए और कभी कभी मनोरंजन के लिए भी गुप्त भाषा का प्रयोग किया जाता है। मतव्य को गोप्य रखना किसी विशिष्ट वर्ग-फौज, पुलिस, व्यापारी, चोर-डाक्, आदि का उद्देश्य होता है। अपने संदेश को केवल अभिप्रेत व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूहों तक पहुँचाने के लिए गुप्त भाषा का जन्म होता है।

11. कृत्रिम भाषा (Artificial language)

कृत्रिम भाषा अर्थात गढ़ी गई या बनावटी भाषा ये भाषा के स्वाभाविक रूप से विकसित होकर बनते है। कुछ विद्धान कूट भाषा को कृत्रिम भाषा के अन्तर्गत रखते है।

कृत्रिम भाषाओं में डा. जेमन हाफ (Dr. Zemmenhoof) द्वारा बनाई 'एस्परैंतो' या एस्पिरैण्टो काफी प्रचलित हुई। यह संसार भर के लिए बनाई गई है। इसका बहुत से देशों में प्रचार है। रेडियो स्टेशनों से भी इस कृत्रिम भाषा के कार्यक्रम आने लगे। दिल्ली में भी इसके पठन-पाठन की व्यवस्था की गई। रुस में इसे सहकारी तौर पर संरक्षण प्रदान किया गया। इसी क्रम में इडो, नोवियल, इंटर लिंगुवा आक्सिडेंटल आदि दर्जन भर कृत्रिम भाषाओं का निर्माण किया गया किन्तु अनेक कमियों और व्याकरणिक विसंगतियों तथा ऊबड खाबडपन के कारण यह भाषा अपने उद्देश्य को पूरा नहीं कर पाई।

12. साहित्यिक भाषा (Literary language) - भाषिक अलंकरणों से सुसज्जित व्याकरण सम्मत, कोमलता से संपृक्त तथा साहित्यकारों की अभिव्यक्ति को साकार रूप देनेवाली भाषा को साहित्यिक भाषा कहा जाता है। साहित्यकारों के अतिरिक्त यह भाषा शिक्षित वर्ग तथा विद्धानों की भाषा हैं।

13. संचार भाषा (Media language/Communication language)

वह भाषा जिसके माध्यम से व्यापक जनता से संपर्क स्थापित किया जाता है उसे संक्षेप में संचार भाषा कहते हैं। आजकल विज्ञान की प्रगति इतनी हो गई है कि संचार के साधन बहुत अधिक हो गए हैं। पत्रकारिता का क्षेत्र विस्तृत हो गया है अतः संचार भाषा भी बहुत ही बदल चुकी है।

अभ्यास

तथ्य परक उत्तर लिखिए-

1. भाषा की परिभाषा दीजिए।
2. बोली किसे कहते हैं?
3. राजभाषा किसे कहते है?
4. संपर्क भाषा किसे कहते है?
5. कृत्रिम भाषा किसे कहते है?
6. एस्पेरैंतो क्या है?
7. कूट भाषा का प्रयोग कहाँ होता है?
8. भाषा को अनुकरण ग्रह्य क्यों कहा गया है?
9. क्या मनुष्य जनम से ही भाषा सीख कर आता है?

II संक्षिप्त उत्तर दीजिए-

1. भाषा की परिभाषा देकर अभिलक्षणों का उल्लेख करें।
2. राजभाषा और राष्ट्रभाषा में अन्तर स्पष्ट करें।
3. बोली और व्यक्ति बोली में अन्तर स्पष्ट करें।
4. बोली और भाषा में अन्तर स्पष्ट करें।
5. गुप्त या कूट भाषा क्या है।
6. उपबोली की विशेषताएँ।

III लेख लिखे/ य विस्तार से उत्तर लिखें।

1. भाषा की परिभाषा देते हुए अभिलक्षण व्यक्त करें।
2. भाषा के विविध रूप।

Module-2

विश्व की भाषाएँ

संसार में अनेकानेक भाषाएँ तथा बोलियाँ हैं। संसार की संपूर्ण भाषाओं की निश्चित संख्या के संबंध में भाषाविदों में एकमत का अभाव है। कहते है विश्व में कुल 2796 भाषाओं में 13 भाषाएँ सर्वाधिक महत्व की मानी जाती है जो निम्न लिखित है, चीनी, अग्रेज़ी हिन्दी स्पेनी जर्मन, जपानी, फ्रांसीसी, हिन्देशियाई, पुर्तगाली, बंगला, इतालवी और अरबी। विश्व की भाषाओं में 1000 से अधिक भाषाएँ अमेरिकी इंडियन हैं। 500 से अधिक भाषाएँ अफ्रीका के नीग्रो द्वारा बोली जाती है। 500 से अधिक, आस्ट्रेलियाई, न्यूगइनिया तथा प्रशान्तसागरीय द्वीपों के निवासियों द्वारा बोली जाती है इसी तरह कई सौ भाषाएँ एशिया में पृथक वर्गों में बोली जाती है।

संसार की भाषाओं का वर्गीकरण

भाषाओं के वर्गीकरण के संबंध में अनेक आधार सुझाए गए हैं लेकिन इनमें से कुछ को छोडकर शेष उतनी लोकप्रियता नहीं प्राप्त कर सके क्योंकि इनके वर्गीकरण का कोई ठोस और व्यापक आधार नहीं रहा है। भाषाविदों ने भाषावर्गीकरण के निम्न सात आधार सुझाए हैं-

1. महाद्वीप के आधार पर- जैसे एशियाई भाषाएँ, युरोपीय भाषाएँ, आफ्रीकी भाषाएँ आदि।
2. देश के आधार पर- जैसे चीनी भाषाएँ भारतीय भाषाएँ आदि।
3. धर्म के आधार पर- जैसे मुसलमानी भाषा हिन्दू भाषाएँ ईसाई भाषाएँ आदि।
4. काल के आधार पर- जैसे ऐतिहासिक, प्रागैतिहासिक, प्राचीन, मध्ययुगीन भाषाएँ।
5. भाषाओं की आकृति के आधार पर- जैसे अयोगात्म तथा योगात्मक भाषाएँ।
6. परिवार के आधार पर- जैसे भारोपीय परिवार की भाषाएँ एकाक्षरी परिवार की भाषाएँ आदि।
7. प्रभाव के आधार पर- जैसे संस्कृत प्रभावित भाषाएँ, फारसी प्रभावित भाषाएँ आदि।

उपयुक्त सभी आधारों में से, आकृति के आधार पर और परिवार के आधार पर वर्गीकरण महत्वपूर्ण है।

I आकृति के आधार पर भाषाओं का वर्गीकरण या आकृतिमूलक वर्गीकरण।

इस तरह के वर्गीकरण में भाषा की आकृति एवं रूप ही आधार है। कुछ भाषावैज्ञानिक यह भी कहते हैं कि इस वर्गीकरण का आधार संबंध तत्व तथा शैली है। शायद इसीलिए भाषा वैज्ञानिकों ने इस वर्गीकरण के लिए Typical classification, पदात्मक या रचनात्मक वर्गीकरण Morphological classification तथा वाक्य मूलक या वाक्यत्मक, Syntactical classification आदि नामों का प्रयोग किया है।

आकृतिमूलक वर्गीकरण का आधार सम्बन्धतत्व है। आकृति या रूप की दृष्टि से संसार की भाषाओं को प्रमुखतः दो वर्गों में रखा जा सकता है-

1. अयोगात्मक भाषाएँ
2. योगात्मक भाषाएँ

1. अयोगात्मक भाषाएँ

इस वर्ग की भाषाओं में योग नहीं रहता अर्थात शब्दों में उपसर्ग या प्रत्यय आदि जोडकर अन्य वाक्य या शब्द में प्रयुक्त होने योग्य रूप नहीं बनाए जाते। वाक्य में स्थान के अनुसार शब्दों का अर्थ लगा लिया जाता है। इसलिए इन भाषाओं को स्थान प्रधान भी कहते हैं।

अयोगात्मक भाषाओं का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण चीनी भाषा है। चीनी भाषा में व्याकरण का सर्वथा अभाव होता है। इस भाषा में एक ही शब्द स्थान तथा प्रयोग के अनुसार कभी संज्ञा, कभी विशेषण, कभी क्रिया तो कभी कर्ता या क्रिया विशेषण या कर्ता तथा कर्म बन जाता है।

उदा : ता लेन - बडा आदमी

लेन ता - आदमी बडा है।

2. न्गो त नि - मैं मारता हूँ तुमको।

नि त न्गो - तुम भारते हो मुझको।

अफ्रीका की सूडानी भाषा (स्थान प्रधान) तिब्बती और स्यामी (निपात प्रथान) बर्मी (निपात प्रधान), अनामी स्वर प्रधान आदि भाषाएँ लगभग इसी कोटी में आती है।

2. योगात्मक भाषाएँ

योगात्मक भाषाओं में संबंधतत्व और अर्थतत्व दोनों में योग हो जाता है, अर्थात मिले जुले रहते है।

संसार की अधिकांश भाषाएँ योगात्मक हैं। योग की प्रकृति के आधार पर तीन वर्गों में बौटा जा सकता हैं।

1. प्राश्लिष्ट योगात्मक (समास प्रधान) (Incorporating)
2. अश्लिष्ट योगात्मक (प्रत्यय प्रधान) (Simple agglutinating)
3. श्लिष्ट योगात्मक (विभक्ति प्रधान) (Inflecting)

1. प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ- इनमें अर्थतत्व तथा संबंधतत्व इनता मिला जुला रहता है कि वाक्य लगभग एक ही शब्द का जाता है।

जैसे संस्कृत ऋतु से आर्तव। शिशु से शैशव आदि।

अर्थ तत्व और संबंध तत्व की दृष्टि से प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ दो भागों में विभक्त की गई है।

(क) पूर्ण प्रश्लिष्ट (पूर्णतः समास ----)

इस तरह की भाषाओं में संबंध तत्व और अर्थतत्व इस तरह जुडे होते है कि लम्बा वाक्य भी एक ही शब्द की तरह लगता है। उत्तरी अमरीका की चैरोकी भाषा का एक उदाहरण:

ना तेन - लाओ

अमोख्रोल — नाव

निन - हम

नाधोलिनिन - हमारे पास नाव लाओ।

मौक्सिको की भाषा का एक उदा :

ने वत्ल - मैं, ने कत्ल - माँस

नी-नक-क - मैं माँस खाता हूँ।

(ख) आंशिक प्रश्लिष्ट (या)

अंशतः प्रश्लिष्ट

इस प्रकार की भाषा में संज्ञा और सर्वनाम क्रिया के साथ इस तरह एकाकार हो जाते है कि क्रिया की स्वतंत्र सत्ता शेष नही रह जाती। संस्कृत, गुजराती तथा यूरोप की बास्क आदि इस वर्ग में रखी जा सकती है।

उदा : बास्क भाषा

दकाराकिओत- मैं इसे उसके पास ले जाता हूँ।

नकारसु- तू मुझे ले जाता है।

हकारत- मैं तुझे ले जाता हूँ।

2. अश्लिष्ट-योगात्मक भाषाएँ

इसमें अर्थतत्व और संबंधतत्व परस्पर जुडी होती है फिर भी दोनों की स्थिति स्वतंत्र रूप से दिखाई देती है। इसके पाँच भेद स्वीकार गए हैं।

(क) पूर्वयोगात्मक या पुरः प्रत्यय प्रधान

(ख) मध्ययोगात्म या अंत प्रत्यय प्रधान

(ग) पूर्वान्त योगात्मक

(घ) अन्य योगात्मकता या पर प्रत्यय प्रधान

(ङ) आंशिक योगात्मक या ईषत प्रत्यय प्रधान।

(का) इन भाषाओं में प्रत्यय के स्थान पर उपसर्ग का प्रयोग होता है। शब्द वाक्य के अन्तर्गत बिल्कुल अलग अलग रहते हैं। शब्दों की रचना में सम्बन्ध तत्व केवल आरंभ में लगता है। इसी कारण ये पूर्वयोगात्म कही जाती है। अफ्रीका में बाँटू परिवार की भाषाओं में यह विशेषता स्पष्ट रूप से पाई जाती है।

उदा : जुलू भाषा में

उमु - एकवचन का चिह्न

अब - बहुवचन का चिह्न

न्तु - आदमी

न्ग - से

इनके योग से शब्द बनते है।

उमुन्तु - कई आदमी

अबन्तु - कई आदमी

न्गउमुन्तु - आदमी से

न्गअबत्तु - आदमियों से।

(ख) इस प्रकार की भाषाओं में संबंधतत्व मध्य में होता है। भारत की मुडा तथा हिन्दु महासागर स्थित मेडागास्कर द्वीप की भाषाएँ इसी कोटी में आती हैं। मुडा परिवार की संथाली भाषा में 'मंझि' का अर्थ है मुखिया। यदि उसके मध्य में 'प' प्रत्यय जोड़ दें तो उसके बहुवचन का रूप हो जाएगा- 'मपंझि' जिसका अर्थ हो जाएगा मुखिया लोगा। ठीक यही स्थिति 'दल' (मारना) से दपल (परस्पर मारना) की है।

(ग) पूर्वान्त योगात्मक- इस श्रेणी की भाषाओं में संबंधतत्व अर्थतत्व के आगे और पीछे या पूर्व और अन्त में लगाया जाता है।

न्यूगिनी की मकोर भाषा में

म्नफ - सुनना

ज- म्न्फ-३- मैं तेरी बात सुनता हूँ।

(घ) अन्य योगात्मकता या पर प्रत्यय प्रधान- इस वर्ग की भाषाओं में संबंधतत्व केवल अन्त में जोडा जाता है। यूराल- आल्टाइक तथा द्रविड परिवार की भाषाएँ ऐसी ही है।

उदा : तुर्की भाषा में,

एवं - घर

एवलोर - कोई घर

एवलेरइम- मेरे घर

कन्नड में, सेवक शब्द से सेवकरु (कर्ता) सेवक रन्तु (कर्म) सेवकरिन्द (करण) सेवकरिंगे (संप्रदान सेवक (र) (संबंध) सेवकरल्लि (अधिकरण) आदि।

(ङ) आंशिक- योगात्मक या ईषत प्रत्यय प्रधान योगत्मक शाखा के अस्लिष्ट वर्ग की अंतिम उपशाखा आंशिक योगात्मक भाषाओं का है। इस वर्ग की भाषाएँ योगात्मक और अयोगात्मक के बीच में पडती है।

कुछ भाषाएँ सर्वयोगात्मक या सर्वप्रत्यय प्रधान भी है जिनमें आदि, मध्य, अन्त तीनों प्रकार के योग होते हैं।

3. श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में संबंध तत्वों को जोडने के कारण अर्थतत्व वाले भाग में कुछ विकार पैदा हो जाते हैं परन्तु संबंध तत्व की झलक अलग ही मालूम पडती है। रूप विकृत होने पर भी संबंधतत्व छिपा नहीं रहता। जैसे अरबी में क त ल (= मारना) धातु से क त ल (= खून) कातिल (मारनेवाला) कित्ल (शत्रु) तथा यकतुलु (= वह मारता है) आदि।

इस वर्ग की भाषाएँ संसार में सबसे अधिक उन्नत है। सामी, हामी और भारोपीय परिवार इसी वर्ग के अन्तर्गत आते है।

श्लिष्ट- योगात्मक भाषाओं के दो उपवर्ग हैं-

(क) अन्तर्मुखी और (ख) बहिर्मुखी

(क) अन्तर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ

इस वर्ग की भाषाओं में जोडे हुए भाग, मूल (अर्थतत्व) के बीच में बिलकुल घुल मिल जाते है। सेमेटिक और हैमेटिक कुल की भाषाएँ इसी वर्ग की है।

उदा : अरबी भाषा का क त ब – लिखना

कातिब - लिखने वाला

किताब - जो लिखा गया हैं

कुतुब - बहुत सी किताबें

यहाँ क त ब व्यंजन तीनों में है पर बीच-बीच में विभिन्न स्तरों के आते से अर्थ बदलता है।

अंतर्मुखी श्लिष्ट योगात्म भाषाओं के भी दो भेद है-

1) संयोगात्मक 2) वियोगात्मक।

(ख) बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्म भाषाएँ

इस वर्ग की भाषाओं में जोडे हुए भाग प्रधानतः मूल भाग के बाद आते हैं। जैसे संस्कृत में गम धातु से गच्छ+ अ + न्ति = गच्छन्ति (जाते हैं) भारोपीय परिवार की भाषाएँ इसी विभाग में आती हैं।

इसके भी भेद किए जाते है,

1. संयोगात्मक
2. वियोगात्मक

आकृति या रूप की दृष्टि से किया गया भाषाओं का वर्गीकरण शुरूआती दौर में मील का पत्थर माना जाता था इसे बहुत अधिक महत्व दिया गया था किन्तु कालान्तर में इसमें कई स्वामियाँ देखी जाने लगी। विद्वानों का कहना था कि आकृतिमूलक वर्गीकरण में विश्व के सभी भाषाओं का विभाजन उपयुक्त ढ़ंग से नहीं हो पाता।

भाषाओं का पारिवारिक वर्गीकरण

भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण से सामान्य तात्पर्य यह है कि उन सभी भाषाओं को एक वर्ग के अन्तर्गत स्थान देना, जो एक ही परिवार से संबंधित है। भाषाओं के वर्गीकरण के अन्य आधारों में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार माना गया है। इस वर्गीकरण के अन्य नाम, ऐतिहासिक, वंशानुक्रमिक या उत्पत्ति मूलक भी है।

पारिवारिक वर्गीकरण के तीन प्रमुख आधार है। 1) ध्वनि की समानता 2) शब्द समूह की समानता और 3) व्याकरण की समानता।

विश्व के भाषा-परिवारों का संक्षिप्त परिचय

संसार में बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या का निश्चित पता अभी तक नहीं लग पाया है। पश्चिम के सुप्रसिद्ध चिन्तक मैरियो पेई 2796 भाषाओं की जिक्र करते है।

विश्व में चार भाषा- खण्ड माने गए हैं।

1. अमरीका भूखण्ड- अमेरीकी परिवार (उत्तरी मध्य तथा दक्षिणी)
2. अफ्रीकी परिवार - इसमें प्रमुखतः चार भाषा परिवार हैं। १) बुशमैन २) बाँटू ३) सूडान ४) हैमेटिक- सेमैटिक।

3. प्रशान्त महासागरीय भूखण्ड - इसमें मुख्यतः मलय-पालिनेशियन परिवार है। कुछ लोग इसे कई परिवारों का समूह मानते हैं।

4. यूरेशिया खंड - इसमें मुख्यतः नौ भाषा परिवार है-

1. हैमेटिक सेमेटिक 2. काकेशियन 3. यूराल - आल्टाइक 4. चीनी 5. द्रबिड 6. आस्ट्रो-एशियाटिक 7. जापानी कोरियाई 8. मलय-पालिनेशियन 9 .भारोपीय

(क) अमेरीका भूखण्ड

सम्पूर्ण अमेरीका महाद्वीप के आदिवासियों की भाषाएँ इस खण्ड में सम्मिलित है। अधिकांश भाषाएँ साहित्य एवं लिपि रहित है तथा अपनी अविकसित दशा में यात्रा पूरी कर रही है। ये सभी भाषाएँ प्रश्लिष्ट योगात्मक प्रधान है। इस खण्ड की भाषाएँ भौगोलिक आधार पर वर्गीकृत की गई है, यथा-

1. उत्तरी अमेरिका- एस्किमो (ग्रीनलैंड) अथबस्की (कनाडा) और अल्गोनकी (संयुक्त राज्य) आदि।

2. मैक्सिकों और मध्य अमेरिका- अजतेक (मैक्सिको) भय, नहुअल्ल आदि।

3. दक्षिणी अमेरिका (अरबक) - करीब, गुअर्नी, तुपी चको, देल, फूगो आदि।

(ख) अफ्रीका भूखण्ड

इस खण्ड की भाषाएँ अमरीकी भूखण्ड की भाषाओं से काफी साहित्य सम्पन्न है। इस खण्ड के अन्तर्गत निम्न भाषाएँ हैं।

1. बुशमैनी - होतेन्तोत परिवार- बुशमैन अफ्रीका के मूल निवासियों की एक जाति का नाम है। यह जाति अफ्रीका के उत्तर में नागामी झील से लेकर दक्षिण में आरेन्ज नदी तक पूरब में लगभग पच्चीस देशान्तर से पश्चिम में अटलांटिक महासागर तक फैली हुई है। इस जाति के नाम पर ही इस भाषा परिवार का नाम बुशमैन रखा गया है। यह भाषा परिवार दक्षिण अफ्रीका का प्राचीनतम भाषा परिवार है। जंगली जाति की भाषा के रूप में प्रसिद्ध इस परिवार के पास साहित्य के नाम पर कुछ भी नहीं है। स्थानीय परम्परागत लोकगीत तथा लोक कथाएँ अवश्य है। 'ब्लाख' के अनुसार इस परिवार की भाषाएँ अश्लिष्ट अन्त योगात्मक थीं लेकिन क्रमशः अयोगात्मकता की ओर जा रही है। ये भाषाएँ सूडान तथा बाँटू

परिवार की जुलू भाषा के काफी निकट है। इस भाषा परिवार के भाषा-भाषियों की संख्या कुल 5 लाख के आस-पास है।

2. बान्टू या बान्तू परिवार- इस परिवार की भाषाएँ अफ्रीका महाद्वीप में भूमध्यरेखा के दक्षिण में पश्चिमी तट से पूर्वी तट तक है। ये भाषाएँ पूरब में हिन्द् महासागर तथा पश्चिम में अटलांटिक महासागर को छूती है। इनके दक्षिण पश्चिम में बुशमैन तथा होटेंटाट और उत्तर में सूडान परिवार की भाषाएँ है। जंजीबार द्वीप की स्वाहिली भाषा भी इसी परिवार की भाषा है। बाँटू परिवार में लगभग 150 भाषाएँ बताई जाती है। इन सभी के तीन वर्गों में बाँटा गया है। 1) पूर्वीवर्ग - मुख्य भाषाएँ, काफिर तथा जुलू 2) मध्यवर्ती वर्ग- सेसुतो 3) पश्चिमी वर्ग- काँगो।

इनमें सभी भाषाएँ साहित्य रहित है। स्वाहिली में कुछ साहित्य अवश्य मिलता है, लेकिन वह भी अरबी भाषा में। बाँटू परिवार की भाषा में लिंगभेद नहीं है। बाँटू परिवार की भाषाएँ लगभग 9 करोड लोगों द्वारा व्यवहृत होती है। एक करोड चालीस लाख लोग स्वाहिली भाषा का प्रयोग करते हैं, शेष अन्य भाषाएँ, जुलु खोसा, गण्डा, रुआण्डा तथा काँगो बोलते है।

3. सूडानी परिवार- अफ्रीका में भूमध्य रेखा के उत्तर लगभग में सवा चार सौ भाषाओं का परिवार है। इसके उत्तरी सिरे पर हामि या हैमेटिक परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं। सूडानी भाषा परिवार में 435 भाषाएँ हैं। इनमें से 5 या 6 की अपनी लिपि है। इस परिवार की भाषाएँ 4 वर्गों में विभक्त है- 1) सेनेगल 2) ईव 3) मध्यवर्ती 4) नीलोत्तरी। इस भाषा परिवार के भाषा भाषियों की संख्य 13 करोड के आस पास है। जिसमें 2 करोड लोग हाउसा तथा शेष, वाई, मोम, इबो, एफिक, कनूरी तथा नूवी आदि बोलते है। इस भाषा के चीनी भाषा की तरह एकाक्षर धातुओं का प्रयोग होता है।

4. हामी (हैमेटिक परिवार)

इस परिवार की भाषाएँ उत्तरी अफ्रीका के सम्पूर्ण प्रान्तों में बोली जाती थीं। इस परिवार पर धार्मिक तथा राजनैतिक कारणों तथा सैमेटिक परिवार की भाषाओं के प्रभाव के कारण इसकी बहुत सी भाषाएँ लुप्त हो गई। इस परिवार की मुख्य भाषा प्राचीन मिश्त्री से ही काप्टी का जन्म हुआ इस काप्टी में ही तीसरी शताब्दी में बाइबिल का अनुवाद किया गया। मिश्त्री भाषा में 6000 वर्ष पहले तक के लेख मिलते हैं। प्राचीन मिश्त्री के दो रूप थे- एक धर्म ग्रथों का दूसरा जन सामान्य का। लीबिया की भाषा लीवी, इथियोपिया की भाषा इथियोपी

सोमाली लैण्ड की भाषा सोमाली इस परिवार की अन्य प्रसिद्ध भाषाएँ है। मिश्त्री भाषा में सरल धातुएँ एकाक्षर तथा अनेकाक्षर है। इसमें मध्य, आदि तथा अन्त में धातुएँ जोडकर पदों की रचना की जाती है। यहाँ क्रियाएँ काल बोधक नहीं होती, बल्कि काल के बोध के लिए सहायक शब्दों का प्रयोग करना पडता है। हैमेटिक भाषा बोलने वालों की संख्या लगभग 2 करोड है।

ईजिल की एक कथा के अनुसार नौह के दूसरे पुत्र हेम अफ्रीका के कुछ भागों में आदि पुरुष के रूप में प्रसिद्ध है कहते है उन्ही के नाम पर इस परिवार का उक्त नाम पडा।

3. प्रशान्त महासागरीय भूखण्ड

इस परिवार की भाषाएँ प्रशान्त महासागर तथा हिन्द महासागर के विस्तृत भूखण्डों में फैली हुई है। अफ्रीका के दक्षिण पुर्व में स्थित मेडगास्कर द्वीप, एशिया के दक्षिण पूर्व में स्थित मलय प्रायद्वीप, इन्डोनेशिया के विभिन्न द्वीपों में फैली हुई है। इस वर्ग में जावा, सुमात्र, वोर्निया, फिलिपाइन्स, फारमोसा, न्यूगिनी आदि न्यूजीलैंड की भाषाएँ आती है। इस खण्ड की भाषाएँ, मलय पोलिनेशियन आस्ट्रोनेशियाई नाम से जानी जाती है।

इस परिवार की भाषाओं को पाँच भागों में विभक्त किया गया है।

1) मलयाई या इंडोनेशियाई परिवार 2) मलेनेशियाई परिवार 3) पोलिनेशियाई परिवार 4) पापुआई परिवार 5) आस्ट्रेलियाई परिवार।

4. यूरेशियाई भूखण्ड

द्रविड परिवार

इस भाषा परिवार का प्रयोग भारत के दक्षिणी प्रदेशों में होता है। द्रविड परिवार की चार मुख्य भाषाएँ हैं जिनका प्रयोग तमिलनाडु, आंन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक तथा केरल में होता है। इनमें तमिलाडु में प्रयोग की जाने वाली तमिल भाषा सबसे सम्पन्न भाषा है। इस परिवार की भाषाओं ने भारोपीय परिवार की भाषाओं को ध्वनि, शब्द समूह तथा व्याकरण तीनों ही दृष्टियों से कुछ प्रभावित किया है। अनेक विद्धानों के अनुसार भारोपीय भाषाओं में टवर्गीय ध्वनियों का विकास, कारक चिह्नों के रूप में स्वतंत्र शब्दों जैसे ने, को से आदि का प्रयोग संयुक्त क्रिया तथा मराठी आदि आर्य भाषाओं में तीन लिंगों का अब तक प्रयोग द्रविड परिवार के प्रभाव के ही कारण है।

चीनी अथवा एकाक्षरी परिवार

इस परिवार की मुख्य भाषा चीनी है। उसी के आधार पर इसे चीनी परिवार कहा जाता है। इस परिवार के अधिकांश शब्द एकाक्षरी होते है। अतः इसे 'एकाक्षर' अथवा एकाक्षरी परिवार भी कहते हैं।

मुख्य भाषाएँ तथा क्षेत्र-चीनी (चीनः चीनी की मदारिन, कैटनी, फुकिनी आदि मुख्यतः 6 बोलियाँ है) मंदारिन ही आज की राष्ट्रभाषा तथा साहित्यिक भाषा है। तिब्बती अथवा भोट, (तिब्बत) बर्मी (बर्मा) श्यामी (इसे थाई भी कहते है। मैतै (इसे कई थई भी कहत है। इस परिवार की गोरो, बोडो, नेवारी आदि भाषाएँ भारतीय सीमा के आसपास बोली जाती है।

इस परिवार की भाषाएँ स्थान प्रधान या अयोगात्मक हैं। प्रत्येक शब्द एक अक्षर का होता है। वाक्य में चाहे जहाँ भी रखे उसके रूप में बदलाव नहीं होता। इस भाषा में सुर और तान का बहुत अधिक महत्व होता है। इन भाषाओं में द्वित्व प्रयोग होता है एक ही शब्द के कई अर्थ होते है। भाषा का व्याकरण नहीं होता। इन भाषाओं में अनुनासिक ध्वनियों का बाहुल्य हैं।

यूराल-आल्टाई परिवार

इस परिवार की भाषाएँ काफी विस्तृत भू-भाग में बोली जाती है। इनका विस्तार क्षेत्र पूर्व में आख्रोटस्क सागर से पश्चिम में तुर्की, हंगरी तथा फिनलैंड तक, दक्षिण पश्चिम में भूमध्य सागर से लेकर उत्तर पूर्व में उत्तरी सागर तक है। इस परिवार के अन्य नाम शुरू में तूरानी, फिनो-तातारिक, स्कीयियन आदि रखे गए थे किन्तु इन नामों को सार्थक नहीं समझा गया और कालान्तर में इस परिवार का नाम यूराल तथा अल्टाई पहाडों के नाम पर ही रखा गया। मुख्य रूप से इन्हें दो भागों में विभक्त किया गया है- यूराल परिवार तथा अल्टाई परिवार।

यूराल परिवार में दो भाषा समूह हैं- फीनीउग्री तथा समोयेरी। अल्टाई में तीन भाषा समूह हैं- तुर्की, मंगोली तथा तुगूजी।

अल्टाई भाषा परिवार की मुख्य भाषा तुर्की है। इसमें लगभग 28 बोलियों हैं। जिनका प्रसार तुर्की से लेकर पूर्वी साइबोरिया की लेना नदी तक है।

काकेशी या काकेशियन परिवार

काकेशस पर्वत के समीप काले सागर से कैस्पियन सागर तक के फैले हुए क्षेत्र में इस परिवार की भाषाएँ बोली जाती है। काकेशस पर्वत के नाम पर इस परिवार का नाम रखा गया है। इस परिवार के दो भाग है।- उत्तरी काकेशियन और दक्षिणी काकेशियन। इन दोनों भागों में पर्याप्त भेद है। उत्तरी काकेशी में स्वरों की कमी और व्यंजनों की प्रचुरता है। उत्तरी काकेशियन परिवार में सरकसी, चेचेन लेगी आदि बोलियाँ है। दक्षिणी काकेशी की प्रमुख भाषा जार्जियन है। इस भाषा का विपुल साहित्य भण्डार है। इसकी अपनी निजी लिपी है। उत्तरी काकेशी परिवार का न साहित्य है न लिपी है।

सेमेटिक (सामी) परिवार

इंजील की एक पौराणिक कथा के आधार पर हज़रत नौह के ज्येष्ठ पुत्र का नाम सेम था। सेम, अरब, असीरिया, तथा सीरिया आदि दक्षिण पश्चिम एशिया के निवासियों के आदि पुरुष माने जाते है। उन्हीं के नाम पर इस परिवार का नाम सेमेटिक या सामी रखा गया।

विश्व के भाषा परिवारों में इसका बडा महत्व है। महत्व का क्रम इस प्रकार है पहला भोरोपीय, द्वितीय स्थान सैमेटिक और तृतीय स्थान चीनी परिवार का है। सैमेटिक परिवार की भाषाओं को दो भागो में रखा गया है- उत्तरी तथा दक्षिणी। उत्तरी वर्ग में प्राचीन फोनोशियन, यहूदी व हिब्रू, असीरियन तथा आरमेइक भाषाएँ आती है। हिब्रू लगभग मृतप्राय भाषा हो चुकी थी लेकिन इज़राइल के निर्माण के बाद यूरोप के सभी यहूदी हिब्रू को पुनर्जीवित करने के लिए इजराइल में इकट्ठा हुए। दक्षिणी वर्ग में प्रमुख भाषा अरबी है। अरबी भाषा की लोकप्रियता ने अनेक भाषाओं को दबा दिया है।

भारोपीय परिवार

विश्व के विविध भाषा-परिवारों में भारोपीय परिवार अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह भाषा परिवार सर्वाधिक विकसित है। इस परिवार की भाषाएँ भारत ईरान अर्मीनिया, संपूर्ण यूरोप, अमेरीका, दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका आस्ट्रेलिया आदि में बोली जाती है। इस परिवार के भाषा-भाषी सर्वाधिक है।

अंग्रेज़ी इस परिवार की मुख्य भाषा है। अंग्रेज़ी के अतिरिक्त फ्रांसीसी, स्पेनी, पुर्तगाली, जर्मन, रूसी, इतालवी बेल्जियम आदि भाषाओं का भी प्रचलन है।

इस परिवार को दो वर्गों में विभक्त किया गया है।

1) कैन्टुम वर्ग 2) सतम वर्ग।

केन्टुम वर्ग की छः शाखाएँ है 1) केल्टिक 2) टयूटानिक 3) लौटिक 4) ग्रीक 5) हिटाइट 6) तोखारी

1. कैल्टिक शाखा- केंटुम वर्ग की लगभग दो हज़ार वर्ष पुरानी इस शाखा के बोलने वाले मध्य यूरोप उत्तरी इटली, स्पेन, एशिया माइनर, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस आदि में रहते थे। आजकल यह आयरलैण्ड स्काटलैंड, इंग्लैंड के वेल्स, कार्नवाल तथा फ्रांस की ब्रिटेन प्रदेशों में व्यवहृत होती है।

हिटाइट

उन्नीसवीं शताब्दी में एशिया माइनर के बोगास्कोई नामक स्थान की खुदाई में मिले कुछ कीलाक्षरों में लिखित लेखों से मि. हत्यूगो विंकलर ने प्रथमः इसका पता लगाया था। अनेक विद्वानों ने इसे अनिश्चय वर्ग की भाषा माना है। इसे हिट्टाइट, खत्ती, हिटाइट, कप्पदोसी, हत्ती कनेसिअन, नेसीय, नेसियन आदि भी कहते है। इस भाषा पर सामी परिवार का भी प्रभाव है।

2. सतम वर्ग-

1) आर्मेनियम 2) बाल्टिक 3) स्लाविक 4) अल्बाती 5) आर्य या भारत इरानी।

सतम वर्ग में आर्य या भारत इरानी वर्ग भारोपीय परिवार की उत्कृष्ट भाषा है। इसका विस्तार क्षेत्र अपने देश के बाहर ईरान, अफगानिस्तान, नेपाल, पाकिस्तान के सिन्ध प्रान्त तथा बलूचिस्तान तक रहा है। विश्व का प्राचीनतम ग्रंथ इसी भाषा में उपलब्ध है। जेन्द-अवेस्ता भी इसी भाषा परिवार की भाषा में हैं। इस शाखा को तीन उपशाखाओं में विभाजित किया गया है।

1) ईरानी भाषाएँ

2) दरद भाषाएँ

3) भारतीय आर्य भाषाएँ।

ईरानी भाषाओं के अन्तर्गत फारसी, पहलवी, अवेस्ता, परतो, बलूची तथा पामीरी भाषाएँ आती हैं।

दरद भाषाओं में दरदी, काफिरी, पैशाची तथा ख्रोवारी भाषाएँ सम्मिलित है।

दरद शब्द संस्कृत भाषा का है जिसका अर्थ है- पर्वत दरद भाषाओं का क्षेत्र पामीर और पश्चिमोत्तर पंजाब के बीच है। दरदी भाषाओं में दो वर्ग है- काफिरी और ख्रोवारी। कश्मीरी भी इसी में रखी जाती है।

अभ्यास

तथ्य परख उत्तर लिखे -

1. आकृति मूलक वर्गीकरण का आधार क्या है?
2. प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ किन्हें कहते है?
3. योगात्मक भाषाएँ किन्हें कहते है?
4. भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण से क्या तात्पर्य है?
5. द्रविड परिवार की मुख्य भाषाएँ कौन सी है?
6. एकाक्षरी परिवार किसे कहते है?
7. सेमेटिक और हैमेटिक भाषाएँ आकृति की दृष्टि से किस वर्ग में आती हैं?
8. भारोपीय परिवार की सबसे प्रमुख भाषा कौन सी है?
9. भारोपीय परिवार के दो वर्ग कौन-कौन से है?
10. एकाक्षरी परिवार की मुख्य भाषा कौन सी हैं?

II संक्षिप्त उत्तर दीजिए-

1. संसार की भाषाओं के वर्गीकरण के मुख्य आधारों का उल्लेख कीजिए।
2. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

Module-3

भारतीय आर्य भाषाएँ

भारोपीय भाषाओं के अंतर्गत आने वाले आर्य या भारत-ईरानी भाषा के सतम वर्ग के अन्तर्गत आने वाले एक भाषा परिवार के रूप में भारतीय आर्य भाषाओं का अध्ययन हुआ है।

भारतीय आर्य, ईरानियों एवं दरद लोगों से अलग होकर 1500 ई. पूर्व के आस पास पश्चिमी एवं पश्चिमोत्तरी सीमा से भारत में प्रविष्ट हुए। इसी समय में भारत में आर्य भाषा का प्रारंभ काल माना जाता है। तब से अब तक के भारतीय आर्य भाषा के विकास काल को 3 कालों में बाँटा गया है और तीनों कालों में आर्य भाषा को तीन नामों से अभिहित किया गया है।

1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा 1500 ई. पूर्व- 500 ई. पूर्व
2. मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा- 500 ई. पूर्व- 1000 ई.
3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषा- 1000 से अब तक

1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा

आर्य जब भारत में आए उस समय उनकी भाषा तत्कालीन ईरानी भाषा से अलग नहीं थी। किन्तु जैसे जैसे यहाँ के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव, विशेषतः आर्येतर लोगों से संपर्क होने लगे भाषा परिवर्तित होने लगी। इस प्रकार वह ईरानी से कई बातों में अलग हो गई। भारतीय आर्य भाषा का प्राचीनतम रूप वैदिक संहिताओं में मिलता है। ब्राह्मणों- उपनिषदों की भाषा संहिताओं के बाद की है। भाषा का और विकसित रूप सूत्रों में मिलता है।

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा के दो रूप मिलते है।

1. वैदिक 2. लौकिक संस्कृत

वैदिक – (1500 ई. पू. से 800 ई. पू. तक) इसे 'प्राचीन संस्कृत', 'वैदिकी', 'वैदिक संस्कृत' या 'छन्दस' आदि अन्य नामों से पुकारा गया है। संस्कृत का यह रूप वैदिक संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यको तथा प्राचीन उपनिषदों आदि में मिलता है। भाषा का यह रूप बोलचाल का रूप न होकर बोलचाल की वैदिक संस्कृत पर आधारित साहित्यिक रूप है।

लैकिक संस्कृत- इसे संस्कृत या क्लैसिकल संस्कृत भी कहते है। भाषा के अर्थ में 'संस्कृत' शब्द का प्रथम प्रयोग वाल्मीकी रामायण में मिलता है। वैदिक काल में भाषा के तीन भौगोलिक रूपों- उत्तरी, मध्यदेशी और पूर्वी- का उल्लेख्र किया जा चुका है। लौकिक संस्कृत का मूल आधार इनमें उत्तरी बोली थी क्योंकि वही प्रामाणिक मानी जाती थी। लौकिक या क्लैसिकल संस्कृत साहित्यिक भाषा है।

वैदिक और लौकिक संस्कृत में अन्तर

1. वैदिक की तुलना में लौकिक संस्कृत में स्वरों की संख्या कम है। 'ऌ' स्वर का पूर्णतः लोप हो गया है।
2. वैदिक संस्कृत में उपसर्ग धातुओं से अलग है पर लौकिक संस्कृत में धातु के साथ ही समबद्ध है।
3. वैदिक भाषा स्वराघात प्रधान थी।
4. सांर्ध-कार्य की दृष्टि से वैदिक संस्कृत में अत्त व्यक्त है जबकि लौकिक संस्कृत में सांर्ध-संबंधी नियम अनिवार्य है।
5. वैदिक में 'र' का प्रयोग अधिक जबकि लौकिक में 'ल' का।

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाएँ

कहा जाता है कि भारत में आर्य भाषा के प्रसार का शीर्ष काल मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा है। इसका काल 500 ई. पू. से 1000 ई. तक का है। इसको प्राकृत भी कहा गया है। प्राकृत को तीन कालों में विभाजित किया गया है।

1. प्रथम प्राकृत- 500 ई. से 1 ई. तक।
2. द्वितीय प्राकृत (ईसवी. सन से लगभग 500 ई.तक)
3. तृतीय प्राकृत 500 ई. से 1000 ई. तक।

1. प्रथम प्राकृत

प्रथम प्राकृत में पालि या अभिलेखी प्राकृत आती है। पालि भाषा का प्रारंभिक स्वरूप बुद्ध वचनों के संग्रह त्रिपिटक में मिलता है। पालि में बौद्ध धर्म के थेरवाद अथवा हीनयान

संप्रदाय का धार्मिक साहित्य रचा गया है। पालि नाम का संबंध-'पा' धातु से माना जाता है। इसका अर्थ है 'रक्षा करना' जिस भाषा ने भगवान बुद्ध के उपदेशों की रक्षा की वह पालि कहलाई। कुछ लोग इसे मगध की भाषा मानते है किन्तु काफी लोग इसे मध्यदेश की भाषा कहते है।

2. द्वितीय प्राकृत

इसके लिए भी प्राकृत नाम का प्रयोग होता है। अश्वघोष के नाटकों की प्राकृत मिश्रित संस्कृत, प्राकृतांश एवं प्राकृत, धम्मपथ की प्राकृत आदि इसमें आती है।

इस प्राकृत के पाँच भेद हैं।

1. शौरसेनी प्राकृत
2. मागधी प्राकृत
3. अर्धमागधी प्राकृत
4. पैशाची प्राकृत
5. महाराष्ट्री प्राकृत

1. शौरसेनी प्राकृत

मथुरा या सूरसेन के आसपास की बोली थी। मध्यदेश की भाषा होने के कारण लोग इसे परिनिष्ठित मानते थे। संस्कृत नाटकों की गद्य भाषा शौरसेनी है। कर्पूरमंजरी का गद्य इसी में हैं। इसका प्राचीनतम रूप अश्वघोष के नाटकों में मिलता है।

2. मागधी प्राकृत

मागधी का मूल आधार मगध के आस-पास की भाषा है। लेका में पाली को ही मागधी कहते है। इसके प्राचीनतम रूप अश्वघोष में मिलता है। इसे गौढ़ी भी कहते हैं। सभी अन्य प्राकृतों से इसका अधिक विकास हुआ है। इसमें स ष के स्थान पर श मिलता है।

उदा : सप्त - शप्त

'र' 'ल' हो जाता है। यथा, राजा-लाजा।

अर्ध मागधी

यह प्राचीन कौशल के आसपास की भाषा है। इसमें मागधी की प्रवृत्तियाँ पर्याप्त मात्रा में मिल जाती है। जैनों ने इसके लिए आर्य, आर्षी आदि का प्रयोग किया है। जैन साहित्य में इसका प्रयोग हुआ है। इसका प्राचीनतम प्रयोग अश्वघोष में मिलता है।

'श' 'ष' के स्थान पर 'स' मिलता है

उदा : वर्ष - वास

दन्त्य ध्वनियाँ अनेक स्थलों पर मूर्धन्य हो गयी है।

उदा : कृत्वा > कट्ठु।

'क' के (ग) होने की प्रवृत्ति।

उदा : एक – एग

4. **पैशाची**

पैशाचिकी→ पैशाचिका →ग्राम्य भाषा, भूत भाषा आदि इसके उपनाम है। महाभारत में पिशाच जाति का उल्लेख है। ये काश्मीर के पास थी। पैशाची में साहित्य नहीं के बराबर है। गुणाढ्य की 'बृहद कथा' मूलतः इसी में थी। इसके कुछ रूपों में 'ल' के स्थान पर 'र' और 'र' के स्थान पर 'ल' होता है।

उदा : रुद - लुद

कुमार – कुमाल

फल - फर।

'ष' के स्थान पर कही 'श' और कही 'म' मिलता है।

विषम –विशमो।

तिष्ठति – तिश्टति

'ल' ध्वनि का में विकास मिलता हैं।

जल — जळ।

कुल — कुळ।

सलिल - सळिल

'न' के स्थान पर कहीं कहीं ण का प्रयोग दिखता है।

णुन — गुण

गन — गण।

स्पर्श वर्णों के तीसरे और चौथे घोष व्यंजत इसमें अघोष हो गये है।

गगन — गकन

मेघ - मेको।

राजा - राचा।

5. महाराष्ट्री

इसका मूलस्थान महाराष्ट्र है। (गाहा-सप्तशति) आदि इसकी अमर कृतियाँ है। कालिदास, हर्ष आदि के नाटकों की भाषा यहीं है। महाराष्ट्री को प्राकृतों में परनिष्ठत माना जाता है। इस भाषा की कोमलता का रहस्य इसमें हुए व्यंजन लोप है। इसमें दो स्वरों के बीच आनेवाले अल्पप्राण स्पर्श क्, त्, प्, द्, ग् आदि प्रायः लुप्त हो गये हैं।

उदा : प्राकृत — पाउआ।

गच्छदि — गच्चई।

महाप्राण स्पर्श ख्, थ्, फ्, घ्, ध् का केवल 'ह' रह गया है।

क्रोध — कोहो।

मुख - मूँह।

पाषाण — पाहाण।

5. तृतीय प्राकृत

तृतीय प्राकृत में अपभ्रंश आती है। अवहट्ट जो अपभ्रंश और आर्यभाषाओं के बीच की कडीं है, सन्धिकालीन भाषा है।

अपभ्रंश

प्राकृत कालीन जन भाषा के विकसित रूप को अपभ्रंश कहते है, जो मोटे तौर पर 500 AD से 1000 AD तक आती है। इसका प्राचीनतम प्रामाणिक प्रयोग पतंजली के महाभाष्य मं मिलता है। तीसरी सदी के लगभग विकृत शब्दों को अपभ्रंश या विभ्रष्ट कहा जाता था। आगे चलकर इस तरह के शब्दों के कारण वह भाषा भी अपभ्रंश या अपभ्रष्ट कहीं जाने लगी। और यह नाम भी अपभ्रंशित होकर अवहट्ट-अवहट-अवहठ और औहट आदि रूपों में भाषा के लिए प्रयुक्त होने लगा।

अपभ्रंश के कुछ रूप

1. शौरसेनी अपभ्रंश

यह शौरसेनी प्राकृत से विकसित है। उत्तर में पहाडी बोलियों के क्षेत्र, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, कुछ पूर्वी पंजाब, मध्यप्रदेश के पश्चिमी भाग, राजस्थान एवं गुजरात में बोली जाती थी। अपभ्रंश साहित्य में इसी भाषा का प्रयोग हुआ है। इसे पश्चिमी अपभ्रंश, नागर अपभ्रंश आदि भी कहते है। परमात्मा प्रकाश, योगसार, पाहुड दोहा, उपदेश तरंगिजी आदि इसकी प्रमुख साहित्यिक कृतियाँ है।

2. ब्राचड अपभ्रंश

इसका स्थान सिन्ध के आसपास था। 'ष', 'श' का 'स' में परिवर्तन इसकी एक विशेषता है।

3. अपनागरक

इसके अन्तर्गत वैदर्भी, गौडी, औहो, कैकेयी, बर्वरी, सिहली, लाटी आदि का उल्लेख है।

4. दक्षिणी अपभ्रंश

इसका संबंध महाराष्ट्र क्षेत्र से था। पुष्पदंत का महापुराण तथा कनकाथर करकण्ड चरित्र आदि इसकी साहित्यिक कृतियाँ है।

5. पूर्वी अपभ्रंश

बंगाल, बीहार, असम्, उडीस आदि इसका क्षेत्र् था सरहप्पा और काण्हपा के दोहे इसी में है। 'क्ष' 'का' 'ख' होना इसकी एक विशेषता है।

क्षण - खण।

अक्षर - आक्खर।

अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएँ

वर्ण 'ऋ' का लिखने में प्रयोग था। किन्तु उच्चारण 'रि' होता था।

अपभ्रंश 'उ' कार बहुल भाषा थी।

उदाः एक्कू - एक

कारणु - कारण

अंगु - अंग

विपासु - प्यासा, पिपास

अपभ्रंश पर स्वराघात, प्रायः आद्यक्षर पर था। इसलिए आद्यक्षर तथा उसका स्वर सुरक्षित है।

जैसे –माणिक्य - मणिक

कमल - कंवल

कुमार - कुँवर

नपुंसक लिंग समाप्त प्राय हो गया। कारकों के रूप बहुत कम हो गये। तत्भव शब्दों का अनुपात अपभ्रंश में सर्वाधक है।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ

लगभग 1000 ई के आसपास अपभ्रंश के विभिन्न रूपों से आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का विकास हुआ। शौरसेनी अपभ्रंश से हिन्दी राजस्थानी, गुजराती, भाषाओं का संबन्ध है। बिहारी बंगला, असमीया, उडिया का संबंध मांगधी अपभ्रंश से है। पूर्वी हिन्दी का अर्ध मागधी से तथा मराठी का महाराष्ट्री अपभ्रंश से संबंध है।

सिंधी भाषा का संबंध ब्राचड अपभ्रंश से जुडा है।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से किया है। 'हेर्नल', ग्रियर्सन, डॉ. धीरेन्द्रकुमार वर्मा, सुनीतिकुमार चाट्टर्जी जैसे विद्वानों का वर्गीकरण इसमें प्रमुख है।

1) हर्नल ने आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं को चार वर्गों में रखा है।

1. पूर्वी गौडियन- पूर्वी हिन्दी।
   बंगाली, असमिया, उडिया।
2. पश्चिमी गौडियन- पश्चिमी हिन्दी
   गुजराती, सिन्धी, पंजाबी।
3. उत्तरी गौडियन- गढवाली, नेपाली (पहाडी)
4. दक्षिणी गौडियन- मराठी।

हर्नल भारतीय आर्य भाषाओं के अध्ययन के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहूँचे कि भारत में आर्य कम से कम दो बार आये। पहले आर्य पंजाब में आकर बस गये थे। कुछ दिन बाद दूसरे आर्यो का हमला हुआ। नवागत आर्य उत्तर से आकर प्राचीन आर्यों के स्थान पर जम गये और पूर्वागत आर्य पूर्व दक्षिण और पश्चिम में आकर फैल गये। इस नवागत आर्य भीतरी बाहरी पूर्वागत आर्य बाहरी कहलाये। उस भीतरी बाहरी को डॉ. ग्रियेर्सन ने अंज्ञातः स्वीकार किया और अपनी और से भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण किया।

2. डॉ. ग्रियेर्सन ने "लिंग्वीस्टिक सर्वे ऑफ इन्डिया" में अपना पहला वर्गीकरण प्रस्तुत किया था।

इसमें उन्होंने आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं को तीन परिवारों के अन्तर्गत रखा जैसे

1. बाहरी उपशाखा।
2. मध्यवर्ती उपशाखा।
3. भीतरी उपशाखा।

बाद में उन्होंने इसमें थोडा सा हेर-फेर करके एक नया वर्गीकरण प्रस्तुत किया जो इस प्रकार है –

1. मध्यदेशीय - पश्चिमी हिन्दी
2. अन्तर्वर्ती - पश्चिमी हिन्दी से विशेष घनिष्टता रखनेवाली
   पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, पहाडी
   हिरंग से संबंध (पूर्वी हिन्दी)
3. बहिरंग - पश्चिमोत्तरी – सिंधी, लहंदा, पंचाबी
   दक्षिणी - मराठी
   पूर्वी – बिहारी, बंगाली, असमिया, उडिया।

3) डॉ. सुनीतिकुमार चाट्टर्जी ने अपनी ओर से एक वर्गीकरण पस्तुत किया।

1. उदीच्य – सिन्धि, लहंदा, पंजाबी
2. प्रतीच्य - गुजराती, राजस्थानी
3. मध्यदेशीय- पश्चिमी हिन्दी
4. प्राच्य - पूर्वी हिन्दी, बंगाली, बिहारी, असमिया, उडिया
5. दक्षिणात्य- मराठी

इस सिलसिले में डॉ. धीरेन्द्रवर्मा ने अपनी ओर से एक वर्गीकरण प्रस्तुत किया।

1. उदीच्य - सिन्धि, लहंदा, पंजाबी
2. प्रतीच्य - गुजराती
3. मध्यदेशीय- राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी
4. प्राच्य - उडिया, असमिया, बंगाली,
5. दक्षिणात्य- मराठी

प्रमुख भारतीय आर्य भाषाओं का पश्चिम

सिन्धी

'सिन्ध' शब्द का संबन्ध विद्धानों ने सिन्धु से जोडा है। मूलतः सिन्धी सिन्ध प्रदेश की ही भाषा है। अब सिन्ध में सिन्धी बोलने वाले प्रायः मुसलमान रह गये है।

सिन्धी हिन्दु प्रायः कच्छ, बंबई, अजमीर तथा दिल्ली आदि में है। सिन्धी भाषा का प्राचीनतम रूप भारत के नाट्य शास्त्र में मिलता है। सिन्धी की प्राचीनतम् पुस्तक महाभारत कही जाती है, जिसकी रचना संस्कृत महाभारत के आधार पर 1000 ई. से कुछ पूर्व हुई थी। सिन्धी का सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ 'शाहजो रिशालो' है। इसकी पाँच प्रमुख बोलियाँ है। सिन्धी के लिए फारसी लिपी का प्रयोग होता है। अब नागरी में भी लिखी जाती है। भारत में सिन्धियों की संख्या बीस लाख से ऊपर है। सिन्धी का संबन्ध ब्राचड अपभ्रंश से है।

लहंदा

लहंदा पश्चिमी पंजाब की भाषा है। अब यह क्षेत्र पाकिस्तान में है। लहंदा का शाब्दिक अर्थ है पश्चिम, सूर्यास्त, उतरना। इसी आधार पर इसका नाम पश्चिमी भी है। ग्रियेर्सन के अनुसार इसके बोलनेवालों की संख्या इकहत्तर लाख है। इसकी अनेक बोलियाँ है। जिनमें मुलटानी, जाफिरी आदि प्रमुख है। इस पर सिन्धि तथा काश्मीरी का बहुत बडा प्रभाव पडा है। इसके लोक साहित्य पर्याप्त मात्रा में है। फारसी लिपी का अधिक प्रयोग होता है। इसका संबन्ध केकय या पैशाची अपभ्रंश से है।

पंजाबी

पंजाबी शब्द फारसी का है। उसका अर्थ है पाँच नदियों का देश। पंजाब प्रदेश की भाषा होने के कारण इसका नाम पंजाबी है। अब इसका क्षेत्र पूर्वी पंजाब और पाकिस्तान स्थित पंजाब है। यह भाषा पहाडी बांगरु, बिकानीरी और लहंदा से घिरी है। इसे सिक्की, खालसी भी कहते हैं। लिपि के आधार पर इसे गुरुमुखी भी कहते है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में पंजाबी सबसे पुरानी भाषा मानी जाती है। प्राकृत शब्दों का ज़्यादातर प्रयोग इसमें होता है। पंजाबी के आदर्श और डोगरी दो रूप मिलते है। परिनिष्ठित रूप अमृतसर के पास माझ में है। डोगरी पंजाब के कुछ भागों में तथा काश्मीर में बोली जाती है। इसमें साहित्य का प्रारंभ बारहवीं शती के अन्तिम चरण से होता है। प्रथम कवि बाबा शक्कर गंज है। आधुनिक लेखकों में मोहन सिंह, अमृता प्रीतम आदि प्रमुख है। इसका विकास पैशाची या केकय अपभ्रंश से माना है।

गुजराती

गुजरात की भाषा है। 'गुजरात' शब्द का संबन्ध 'गुर्जर' जाति के लोगों से है। यह मूलतः शक् थे। और पाँचवी सदी के आसपास भारत में आये थे। 'गुजरात' शब्द का प्रयोग 1000 ई. के लगभग हो गया था। इसका संबन्ध शौरसेनी अपभ्रंश से है। प्राचीन गुजराती के प्रमुख साहित्यकार (उपन्यासकार) विनय चन्द्र सूरी, राजशेखर, नरसी मेहता आदि हैं। इसका अपनी लिपि है। जो नागरी से बहुत मिलती जुलती है। यह शिरोरेखा विहीन है।

जिप्सी

जिप्सी भाषाएँ मूलतः भारोपीय परिवार की है। ग्रियर्सन ने इसकी बोलनेवालों की संख्या दो लाख से ऊपर बतायी है। संस्कृत मूल के शब्दों में इनमें घ, ध, भ के स्थान पर ख, थ, फ मिलता है। ट वर्ग ध्वनियाँ प्रायः समाप्त हो गयी है। ईजिपषियन शब्द ही विकसित होकर जिप्सी बन गया है। बंजारा या जिप्सी लोग भारत के विभिन्न भागों में फैल गये है।

बंगाली

बंगाली भाषा गंगा के उत्तर-पश्चिम भागों में बोली जाती है। साहित्यिक भाषा में संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रचार सबसे अधिक है। उत्तरी पूर्वी तथा पश्चिमी बंगाली में भेद है। पूर्वी बंगाली का केन्द्र दाका है। यह भाग अब पाकिस्तान में चला गया है। बंगाली उच्चारण की विशेषता 'अ' का 'ओ' और 'स' का 'श' कर देना प्रसिद्ध है। इस भाषा का साहित्य उत्तम अवस्था में हैं। बंगाली लिपि पुरानी देवनागिरी का ही एक रुपान्तर है।

असमीया

यह असम प्रदेश में बोली जाती है। वहाँ के लोग इसे असमिया कहते है। उडिया की तरह असमिया भी बंगाली से मिलती-जुलती है। असमीय भाषा के प्राचीन साहित्य की यह विशेषता है कि उसमें ऐतिहासिक ग्रन्थों की कमी नहीं है। असमीय भाषा प्रायः बगाली लिपि में लिखी जाती है।

मराठी

दक्षिण में महाराष्ट्रीय अपभ्रंश की पुत्रि मराठी भाषा है। मुम्बई प्रान्त में पुना के चारों ओर तथा मध्य प्रान्त के नागपूर आदि जगहों में बोली जाती है। मराठी का साहित्य लोकप्रिय

और प्राचीन है। मराठी में संस्कृत से तत्सम शब्द पर्याप्त मात्रा में है। इसपर द्राविड परिवार का भी प्रभाव पडा है। मराठी में 'च' वर्ण की प्रधानता है। ग्रियेर्सन मे मराठी की लगभग 39 बोलियों का उल्लेख्र किया है। कोंकिणि इसकी प्रमुख्र बोली है। पत्र व्यवहार में कभी-कभी मोडी लिप भी प्रयुक्त होती है।

कन्नौजी

कन्नौज उत्तरप्रदेश में स्थित एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर है। यह शब्द कान्यकुबज का तत्भव रूप है। कनौजी का उत्भव शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। यह व्रज भाषा से बहुत अधिक मिलती-जुलती है। कुछ लोग इसे व्रज की उपबोली भी मानते है। कन्नौजी में केवल लोक साहित्य मिलता है।

अवधि

इसका केन्द्र अयोध्या है। अयोध्या का विकसित रूप अवध है जिससे अवधी शब्द बना है। इसका उद्भव अर्धमागधी अपभ्रंश से हुआ है। अवधि में साहित्य तथा लोक साहित्य पर्याप्त मात्रा में है। जायसी, तुलसीदास, उस्मान आदि इसके प्रसिद्ध कवि है।

राजस्थानी- वर्ग

1. पश्चिमी राजस्थानी (मारवाडी)

राजस्थान के पश्चिम भाग में मारवाडी बोली जाती है। शौरसेनी अपभ्रंश से इसका विकास हुआ है। मारवाडी में साहित्य और लोक साहित्य बठी मात्रा में है। 'मीराभाई के पद' इसमें लिखे गये है।

2. पूर्वी राजस्थानी (जयपुरी)

राजस्थान के पूर्वी भाग में बोली जाती है। इसकी प्रतिनिधि बोली जयपुरी है जिसका केन्द्र जयपुर है। शौस्सेनी अपभ्रंश के उपनागर रूप से विकसित इस बोली में लोक साहित्य है।

3. उत्तरी राजस्थानी (मेवाली)

राजस्थान के उत्तर भाग में इसका क्षेत्र है। मेवा जाति के इलाके में बोली जाने के कारण मेवाली नाम पडा। इस पर हरियानवीं का बहुत अधिक प्रभाव है। शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित मेवाली में लोकसाहित्य है।

4. दक्षिणी राजस्थानी (मालवी)

राजस्थान के दक्षिण भाग में इसका क्षेत्र है। मालव में बोली जाने के कारण इसे मालवी कहते है। शौरसेनी अपभ्रंश के उपनागर रूप से इसका विकास हुआ है। इसमें कुछ साहित्य और लोक साहित्य मिलते हैं।

पश्चिमी हिन्दी

यह मध्यदेश की भाषा है। मीरट तथा, बिजनोर के निकट बोली जानेवाली पश्चिमी हिन्दी के एक रूप खडी बोली से वर्तमान साहित्यिक हिन्दी तथा उर्दु की उत्पत्ति हुई है। समस्त हिन्दी प्रदेश का वर्तमान साहित्य खडी बोली हिन्दी में लिखा जा रहा है। पढं-लिखे मुसलमानों में उर्दु का प्रचार है।

पूर्वी हिन्दी

पूर्वी हिन्दी का क्षेत्र पश्चिमी हिन्दी के पूर्व में पडता है। इसकी उपभाषाएँ कुछ बातों में पश्चिमी हिन्दी से मिलती-जुलती है। इसकी तीन मुखा उपभाषाएँ

1. अवधि 2. बुपेली और 3. छत्तीसगढी हैं।

1. अवधि में कुछ साहित्य मिलता है।

पूर्वी हिन्दी की उपभाषा देवनागिरी लिप में लिख जाती है।

बिहारी

इसकी उत्पत्ति मागधी अपभ्रंश से हुई है। इस वर्ग में तीन मुख्य उपभाषायें है।

1. मैथिली 2. मगली 3. भोजपुरी

उडिया

यह वर्तमान उडीसा प्रान्त में बोली जाती है। उडिया शब्द का शुद्ध रूप ओडिया है। इसका व्याकरण बंगाली व्याकरण से बहुत मिलता जुलता है। यह मागधी अपभ्रंश से निकली है। इस भाषा में तेलुगु और मराठी के शब्द बडी मात्रा में पाये जाते है। मुसलमानों और अंग्रेज़ों के कारण फारसी, और अंग्रेज़ी शब्द भी इसमें हैं।

Module-4

हिन्दी नाम और उसके विभिन्न रूप

हिन्दी शब्द का उद्‌भव संस्कृत शब्द सिन्धु से माना जाता है। सिन्धु सिन्ध नदि को कहत थे और उसी के आधार पर उसके आसपास की भूमि को भी सिन्धु कहने लगे। यह सिन्धु शब्द इरानी में आकर हिन्दु और फिर हिन्द हो गया। अतः इसका अर्थ हुआ सिन्ध प्रदेश। इस शब्द का अर्थविस्तार हुआ और हिन्द शब्द धीरे धीरे पूरे भारत का वाचक हो गया। 'हिन्द' शब्द में इरानी प्रत्यय 'ईक' लगाने से 'हिन्दीक' बना और जिसका अर्थ 'हिन्द का'। हिन्दी भी हिन्दीक का परिवर्तित रूप है।

हिन्दी शब्द का प्रयोग आज मुख्य रूप से तीन अर्थों में हो रहा है।

1. हिन्दी शब्द का विस्तृत अर्थ है हिन्दी प्रदेश में वाली जानेवाली सत्रह बोलियाँ।

   हिन्दी साहित्य के इतिहास में हिन्दी शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है।

2. भाषा विज्ञान में पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी को ही हिन्दी मानते है। इस अर्थ में इन बोलियों का सामूहिक रूप है हिन्दी (ब्रज, खडीबोली, हरियानवी, बुन्देली, कन्नौजी, अवधि, बघेली, और छत्तीसगढी)

3. हिन्दी का संकुचित अर्थ है खडीबोली। उसी परिनिष्ठित हिन्दी का मानक हिन्दी नाम से ही प्राप्त है। खडीबोली हिन्दी की मुख्य तीन शैलियाँ होती है।

   - हिन्दी
   - उर्दु
   - हिन्दुस्थानी

- **हिन्दी (हिन्दवी)**

इस भाषा को यह नाम मुसल्मानों द्वारा दिया गये यह मूल रूप से दिल्ली और उसके आसपास की भाषा है। इसकेलिए हिन्दुई (हिन्दु + इ), हिन्दवी नाम भी प्रचलित है। इसीको मुसलमान शासकों ने जनता से दैनिक व्यवहार के लिए अपनाया था।

उर्दु : यह शब्द मूलतः तुर्की भाषा का है। तथा इसका अर्थ है 'शाहीशिबिर'। तुर्कों के साथ यह शब्द भारत में आया और इसका यहाँ प्रारंभिक अर्थ 'खेमा' या फौजी पडाव था। दरबार या सैनिक शिबिर में एक मिश्रित भाषा का जन्म हुआ जो ज़बाने उर्दु कहलायी। इसका व्याकरण हिन्दी के समान ही था। और संज्ञा शब्द अरबी फारसी से स्वतंत्रर्ता पूर्वक प्रयुक्त करते थे। आगे चलकर "ज़बाने" लुप्त हो गया। 'उर्दु' नाम मात्र रह गया। उर्दु शब्द का भाषा के अर्थ में प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ से हुआ। उर्दु और हिन्दी लगभग समान है।

हिन्दुस्थानी : 'हिन्दुस्थान' के साथ 'इ' प्रत्यय जोडने से हिन्दुस्थानी बना है। हिन्द के लिए यह शब्द उर्दु के जन्म के बहुत पहले से ही प्रयुक्त होता रहा। यूरोपीय लोगों ने 'हिन्दु' के लिए हिन्दुस्थानी शब्द का प्रयोग 17 वीं शताब्दी के आरंभ से ही कर दिया था। हिन्दुस्थानी से उनका तात्पर्य उस सर्व सामान्य व्यावहारिक भाषा से था जो सारे देश में व्याप्त थीं। उसमें तत्सम, तत्भव देशज तथा अरबी फारसी के व्यावहारिक शब्द भी होते थे। राजनीतिक क्षेत्र में काम करनेवालों ने हिन्दी शब्द को छोडकर हिन्दुस्तानी शब्द ग्रहण किया। अंग्रेज़ी शासन के अन्त तक भारतीय राष्टीय कोन्ग्रेस इसी शब्द पर ज़ोर देती रही। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दुस्तानी शब्द कुछ लुप्त हो गया। साहित्य के लिए संस्कृत शब्दावली को अपनाना अनिवार्य हो गया। फलतः संस्कृत शब्दों से संपन्न हिन्दी को ही राजभाषा का स्थान दिया गया।

हिन्दी भाषा का उद्‌भव और विकास

वैदिक काल में जनपदों की भाषा अपनी स्वाभाविक गति से विकसित हो गयी थी। वेदों की भाषा ने साहित्यिक रूप धारण किया था। ईसा के 500 वर्ष पूर्व तक साहित्यिक भाषा ने संस्कृत का रूप धारण किया था। जन सामान्य की भाषा को प्रमुखतः तीन कालों में विभाजित किया जाता है।

- प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल, मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाकाल, और आधुनिक भारतीय आर्य भाषा काल।

- प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल में संस्कृत भाषा व्याकरण बहुल हो गई।
- मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा काल में पाली, प्राकृत और अपभ्रंश के रूप में भाषा का विकास हुआ। वैदिक भाषा संयोगात्मक थी। वह आगे विकसित होकर वियोगावस्था की ओर अग्रसर होती गयी।

- आधुनिक भारतीय आर्य भाषा काल में यह वियोगावस्था पूर्ण हो गई। पूर्वी भाग में बँगला, असमिया, बिहारी तथा, उडिया, मध्य भाग में पूर्वी हिन्दी पश्चिमी हिन्दी तथा पंजाबी और राजस्थानी पश्चिम में लहंदा और सिन्धी-तथा दक्षिण पश्चिम में गुजराती, मराठी आदि आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास हुआ।
- हिन्दी का विकास तीन कालों में तीन अवस्थाओं में हुआ।
- प्रथम अवस्था

  प्राचीन काल – 1000-1500
- द्वितीय अवस्था

  मध्यकाल – 1500-1800
- तृतीय अवस्था

  आधुनिक काल – 1800 - अब तक
- प्रथम अवस्था

  इस अवस्था में अपभ्रंश और हिन्दी साथ साथ चल रही थी। हिन्दी अपभ्रंश से मुक्त होने का प्रयत्न कर रही थी। यह युग सन् 1500 तक माना जाता है। इस युग में हिन्दी की तीन शैलियाँ देखने को मिलती है।
- डिंगल शैली

  उस समय राजस्थान तथा दिल्ली के आसपास के जनसमुदाय की भाषा थी डिंगल। रजपुत्र शजाओं के आश्रित कवि 'चारण' और 'भाट' इस भाषा में रचना करते थे। वीररस की प्रधानता के कारण अपभ्रंश भाषा का प्रयोग भी इसमें हुआ था। पृथ्वीराज रासो इस शैलि में लिखित एक प्रमुख वीर काव्य है। इसमें राजस्थानी, व्रज, अपभ्रंश और खडीबोली का मिश्रण है। जगनिक द्वारा रचित आल्हा खण्ड भी इस युग की रचना मानी जाती है।
- साधु-संतों की शैली

  यह शैली साहित्यकता व्याकरण एवं छन्द नियमों से रहित थी। इस शैली का आरंभ सिद्ध तथा नाथ पंथियों से होता है और संत कबीर, नानाक आदि से। साधु-संत देश भर भ्रमण करनेवाले होने के कारण उनकी भाषा में एकरूपता नहीं। उनकी भाषा एक प्रकार की खिचडी भाषा थी। गोरखनाथ जैसे पढ़े लिखे संतों में स्थिरता पायी जाती है।

- सांप्रदायिक कवियों की शैलि

  इस शैली में बनावट नहीं, अपभ्रंश का प्रभाव भी नहीं है। खुसरों की भाषा खडीबोली है। विद्यापति इस काल के है। उनकी भाषा मैथिली होते हुए भी हिन्दी के निकट है।

- द्विदीय अवस्था (मध्यकाल-1500 -1800)

  हिन्दी के विकास का दुसरा युग 17 वीं शताब्दी से शुरु होता है। उस समय खडीबोली व्यावहारिक भाषा थी। लेकिन हिन्दु एवं मुसलमान इस भाषा में रचना नहीं करते थे। उस समय भक्ति आन्दोलन चल रहा था। व्रज कृष्ण भक्ति का केन्द्र था अतः व्रज भाषा काव्य भाषा बन गयी। सूर तथा अष्टछाप के कवियों ने व्रज भाषा में रचनाएँ की तुलसी ने कवितावल, विनयपत्रिका, गीतावली आदि रचनाएँ व्रज भाषा में की, हिन्दी प्रदेशों में प्रेममार्गी शाखा के कवियों ने दोहा चौपाई शैली को अपनाया।

  खडी बोली में दक्षिण के मुसलमानों द्वारा काव्य रचना आरंभ हुई। इसमें अरबी, फारसी शब्दों का बाहुल्य था। इस समय एक ओर रतिकालीन कवि व्रज भाषा में श्रृंगारी रचना कर भाषा को कोमल कांत पदावली से सुसज्जित कर रहे थे। तो दूसरी ओर राजदरबार के आश्रित कवि उर्दु में गालिन आदि प्रसिद्ध कवियों ने उच्चकोटि की काव्य रचनाएँ की।

- तृतीय अवस्था- आधुनिककाल (1800 -अब तक)

इस समय भारत अंग्रेज़ी शासन के अधीन था। अंग्रेज़ों ने कर्मचारियों के दैनिक व्यवहार केलिए खडीबोली को अपनाया। और उसके लिए हिन्दुस्तानी नाम स्वीकार किया। उन्होंने हिन्दी (खडीबोली) में पुस्तकें छपायी। काव्य क्षेत्र में भी धीरे-धीरे खडीबोली का अधिकार हो गया। वर्तमान काल में हिन्दी का तात्पर्य खडीबोली हिन्दी से है। इसमें संस्कृत शब्दावली का बाहुल्य है। संघ सरकार ने संविधान के अनुच्छेद के अनुसार देवनागिरी लिपि में लिखित हिन्दी को राजभाषा का गौरवान्विक पद दिया है। आज हिन्दी संपूर्ण भारत की संपर्क भाषा के रुप में विकसित हो रही है।

- हिन्दी के शब्द समूह

  हिन्दी भाषा के शब्द भंडार में चार प्रकार के शब्द है।

  - तत्सम
  - तद्भव
  - देशज
  - विदेशी

- तत्सम

'तत्सम' में 'तत' का अर्थ है वह अर्थात् संस्कृत। 'सम्' का अर्थ है समान अर्थात् तत्सम उत शब्दों को कहते है जो संस्कृत के समान हो। या संस्कृत जैसे हो। ये शब्द संस्कृत भाषा से बिना किसी ध्वनि परिवर्तन के साथ हिन्दी में आ गये है। कृष्ण, कर्म, गृह, हस्त, धर्म आदि शब्द तत्सम है। हिन्दी में श्रोत की दृष्टि से तत्सम शब्द तीन प्रकार के है।

- पालि
- प्राकृत
- अपभ्रंश से आनेवाले शब्द अचल, अचला, काल, कुसुम दण्ड, आदि ऐसे शब्द है। इस वर्ग के शब्दों की संख्या काफ् बडी है। यह शब्द परंपरागत रूप से पाली, प्राकृत, अपभ्रंश से होते हुए हिन्दी में आ गये है।

2. संस्कृत से सीधे हिन्दी में आनेवाले शब्द

जैसे- कर्म, विद्या, ज्ञान, कृष्ण, मृग, मधुर, कशल आदि

3. संस्कृत के व्याकरणिक नियमों के आधार पर हिन्दी में आये तत्सम शब्द। इस प्रकार के अधिकाश शब्द आधुनिक काल में शब्दों की कमी की पूर्ती के लिए बनाए गए है। अधिकांश पारिभाषिक शब्दों को भी ऐसे बनाये गये।

जैसे- संपादकीय, प्राध्यापक, रेखाचित्र समाचार पत्र, पत्राचार।

तद्भव शब्द

हिन्दी शब्द समूह में यह तद्भव शब्द बहुत अधिक है। तद्भव के अर्थ है- 'उससे' ' उत्पन्न' (संस्कृत से) यह संस्कृत से उत्पन्न माने जाते है। संस्कृत शब्दों का कुछ परिवर्तन करके हिन्दी में प्रयुक्त करते है।

जैसे - हस्त से हाथ

कर्म से काम

गृह से घर

देशज

हिन्दी में अनेक शब्द ऐसे भी है। जो भारत की अनेक भाषाओं से आये है।

जैसे- देश- द्राविड

द्राविड भाषाओं से आये हुए कुछ शब्दों का प्रयोग हिन्दी में प्रायः बुरे अर्थ में होता है।

द्राविड -पिल्लै शब्द का अर्थ होता है- पुत्र।

यही शब्द हिन्दी में पिल्ला होकर कुत्ते के बच्चे के अर्थ में होता है।

विदेशी

सैकड़ों वर्षों से विदेशी शासन में रहने के कारण हिन्दी पर विदेशी भाषाओं का प्रभाव अधिक पडा है। यह प्रभाव प्रमुख रूप से दो प्रकार के है।

1. मुसलमानी प्रभाव
2. यूरोपीय प्रभाव

मुसलमानी प्रभाव से ही अनेक फारसी, अरबी, एवं तुर्की शब्द हिन्दी में आये है और यूरोदीप प्रभाव के कारण अनेक अंग्रेज़ शब्द भी हिन्दी में मौजूद है।

Module-V

लिपि

किसी भाषा की ध्वनियों या शब्दों को लिखित रूप में प्रकट करने के लिए जो चिह्न काम में लाये जाते है, वे चिन्न सामूहिक रूप से उस भाषा की लिपि कहलाते है। लिपि के विकास क्रम हमें पाँच प्रकार की लिपियाँ मिलती है।

1. चित्रलिपि
2. सूत्रलिपि
3. प्रतीकात्मक लिपि
4. भावमूलक लिपि
5. ध्वनिमूलक लिपि

1. चित्र लिपि

चित्रलिपि लेखन के इतिहास की पहली सीढी है। चित्रलिपि में किसी प्रकार के विशिळ वस्तु केलिए उसका चित्र् बना लिया जाता था- जैसे सूर्य के लिए जाला और चारों ओर निकली रेखाएँ। विभिन्न वस्तुओं केलिए उसके चित्र आदमी के लिए आदमी का चित्र तथा उसके विभिन्न अंगो केलिए उनभागों के चित्र आदि। प्राचीन काल में चित्र लिपि बहुत व्यापक थी। चित्रलिपि से अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ होती है।

1. व्यक्ति वाचक संज्ञाओं को व्यक्त करने के लिए उसमें कोई साधन नहीं था। आदमी का चित्र किसी भी प्रकार कोई भी बना सकता था, पर कृष्णा, गोपाल, मोहन आदि का अलग अलग चित्र बनाना साधारणतया संभव नहीं था।
2. स्थूल वस्तुओं का प्रदर्शनतो संभव था, पर भावो या विचारों का चित्र संभव न था।
3. शीघ्रता यह चित्र नहीं बनाये जा सकते थे।
4. काल, समय आदि के भावों को व्यक्त करने के साधनों का इसमें अभाव था।

2. सूत्र लिपि

सूत्र लिपि का इतिहास भी बहुत पुराना है। इसकी परम्परा प्राचीन काल से अब तक किसी न किसी रूप में चली आ रही है। स्मरण केलिए आज भी लोग, रूमाल आदि में गाँठ देते है। प्राचीन काल में सूत्र, रस्सी या पेडों की छाल आदि में आँठ दी जाती थी। इस आधार पर भाव कई प्रकार से व्यक्त किये जाते है। इसमें प्रधान है।

- रस्सी में रंग- बिरंग सुत्र बाँधकर
- रस्सी को विभिन्न रंगों से रंगाकर
- विभिन्न रंगों की मोती बाँधकर
- विभिन्न लंबाइयों की रस्सियों से
- विभिन्न मोटाइयों की रस्सियों से।

इस प्रकार का श्रेष्ठ उदाहरण पीरु की किपु लिपि है।

चीन एवं तिबत्त में इसका स्थान है।

3. प्रतीकात्मक लिपि

यं शुद्ध अर्थ मे किपि न होते हुए भी दूरस्थ व्यक्ति के विचार भी उनके द्वारा भेजी गयी वस्तुओं के द्वारा जाने जा सकते है। ये प्रतीकात्मक पद्धति है। कई देशों में प्राचीन काल से इसका प्रचार मिलता है। मुर्गी के बच्चों का कलेजा भेजना, एक मिर्च लाल कागज़ में लपेटकर भेजना आदि का अर्थ है कि युद्ध केलिए तैयार हो जाओ। गाड की लाल या हरी झंडी निकालना, युद्ध में सफेद झंडा फहराना आदि इसी के अन्तर्गत आ सकते है। लेकिन उसका प्रयोग बहुत ही सीमित है।

4. भावमूलक लिपि

यह लिपि चित्र लिपि का ही विकसित रूप है। चित्रलिपि में चित्र वस्तुओं को व्यक्त करते है, पर भाव लिपि में स्थूल वस्तुओं के अतिरिक्त भावों को थी व्यक्त करते है।

उदा:- चित्र लिपि में पैर का चित्र पैर को व्यक्त करता था पर भावमूलक लिपि में वह चलने का भाव भी व्यक्त करने लगा।

कभी-कभी चित्र लिपि के दो चित्रों को एक में मिलाकर भी भावमूलक लिपि में भाव व्यक्त किये जाते है-

जैसे- दुख के लिए आँख का चित्र और उससे बहते आँसु। इस लिपि के द्वारा बडे बडे पत्र आदि भी भेजे जाते है।

चीनी आदि के बहुत से चित्र आज तक ऐसी श्रेणी के है।

5. ध्वनिमूलक लिपि

इस लिपि में चिह्न किसी वस्तु या भाव को न प्रकट कर ध्वनि को प्रकट करते है, और उनके आधार पर किसी वस्तु या भाव का नाम लिखा जाता है। नागरी, अरबी, तथा अंग्रेज़ी आदि भाषाओं की लिपियाँ ध्वनि मूलक है। इसके दो भेद है

- अक्षरात्मक
- वर्णात्मक

अक्षरात्मक लिपि में चिह्न किसी अक्षर को व्यक्त करता है वर्ण को नहीं। नागरी लिपि अक्षरात्मक है। लिपि विकास की प्रथम सीढी चित्र लिपि है तो इसकी अन्तिम सीढी वर्णात्मक लिपि है। वर्णात्मक लिपि में ध्वनि की प्रत्येक इकाई के अलग अलग चिह्न होते है और उनके आधार पर सरलता से किसी भी भाषा का कोई भी शब्द लिखा जा सकता है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से यह आदर्श लिपि है। रोमन इसी प्रकार की है (कक्ष)

भारत की प्राचीन लिपियाँ

भारत में लिखने की कला का ज्ञान लोगों को अत्यन्त प्राचीन काल से है। इसके प्राचीनतम नमूने सिन्धु घाटी में मिले है। सिन्धु घाटी की लिपि की उत्पत्ति के संबन्ध में प्रायः तीन मत है।

- यह द्राविड़ उत्पत्ति है
- यह सुमेर उत्पत्ति है
- यह आर्य उत्पत्ति है

आधार सूत्रों की कमी के कारण इस लिपि की उत्पत्ति या उत्पत्ति स्थान के संबन्ध में निश्चय के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता।

सिन्धु घाटी की लिपि को छोड दिया जाए तो भारत के पुराने शिलालेखों और सिक्कों पर दो लिपियाँ मिलती है-

- ब्राह्मी
- खरोष्ठी

- **खरोष्ठी लिपि**

इसके प्राचीनतम लेख विदेशी राजाओं के सिक्कों और शिलालेखों में मिलते है। ऐसा अनुमान है कि इसका प्रचलन चौथी सदी (1400 BC -7300 BC) ई पूर्व से तीसरी सदी ईं पूर्व तक है। खरोष्ठी नाम पडने के संबन्ध में विद्धानों में अनेक मत है।

- खरोष्ठ नामक व्यक्ति ने इसको बनाया है। एसा एक मत है।
- खरोष्ठ नामक सीमा प्रान्त में इसका प्रचलन था।

इसलिए खरोष्ठी नाम पड गया। ऐसा भी मानता है।

- आचार्य राज्य बली पाण्डे ने कहा है कि यह लिपि गथे के ओंठ के समान बेढंगे, इसलिए यह नाम पडा।

बनावट की दृष्टि के आरमेयिक लिपि के ग्यारह अक्षरों से बहुत मिलते जुलते है। आरमेयक लिपि खरोष्ठी लिपि से पुरानी है। आंरमेयक लिपि खरोष्ठी लिपि से पुरानी है। तक्षशिला में आरमेयिक लिपि में प्राप्त शिला लेखों में यह स्पष्ट है कि भारत से आरमेयिक लोगों का संबन्ध था। इसलिए कुछ लोग मानते है कि खरोष्ठी लिपि विदेशी लिपि है।

दूसरा मत खरोष्ठी लिपि को शुद्ध भारतीय मानने का है। यह मत केवल तर्क पर आधारित है। खरोष्ठी लिपि पहले उर्दु की भाँति दायें से बायें को लिखी जाती थी। बाद में नागरी की भाँति बाएँ से दायें को लिखी जाने लगी। यह पूर्णरूप से वैज्ञानिक लिपि नही है। काम चलाऊ लिपि है। इसमें अक्षरों की संख्या सैंतीस है।

- ब्राह्मी लिपि

प्राचीन काल में भारत की सर्वश्रेष्ठ लिपि है। इस लिपि को ब्राह्म नाम पडने के संबन्ध में कई मत है। इस लिपि का प्रयोग इतने प्राचीन काल से होता आ रहा है कि इसके निर्माता के बारे में लोग कुछ नही जानते। इसलिए लोगों का मानना है कि विश्व की अन्य चीज़ों की भाँति इसका निर्माता भी ब्रह्मा है। इस आधार पर इसे ब्राह्मी नाम पडा।

चीनी विश्वकोष में उसका निर्माता कोई ब्रह्मा नाम की आचार्य लिखे गये है। अतः इनके नाम पर ब्रह्मी पड़ना संभव है। भारतीय आयो ने ब्रह्म (वेद या ज्ञान) के रक्षा के लिए इसको बनाया। कुछ लोग ब्राह्मणों के प्रयोग में विशेष रूप से होने के कारण इसे ब्राह्मी कहने लगे। यह मत केवल अनुमान पर आधारित है।

नागरी लिपि

भारत की प्राचीन लिपि ब्राह्मी का प्रयोग लगभग तीन सौ वर्षों तक होता रहता है। बाद में इसकी दो शैलियों का विकास हुआ-

- उत्तरी शैली
- दक्षिणी शैली
- उत्तरी शैली से गुप्त लिपि का विकास हुआ जो पाँचवीं सदी तक प्रयुक्त होती रहीं। गुप्त लिपि से कुटिल लिपि विकसित हुई जो सातवीं सदी तक प्रयुक्त होती रहीं इस कुटिल लिपि से ही नवीन सदी के लगभग नागरी के प्राचीन रूप का विकास हुआ। जिसे प्राचीन नागरी कहते है। प्राचीन नागरी का क्षेत्र उत्तर भारत है। किन्तु दक्षिण भारत के कुछ भागों में भी इसका प्रयोग मिलता है। दक्षिण भारत में इसका नाम नागरी न होकर नदी नागरी है। प्राचीन नागरी से आधुनिक नागरी, गुजराती राजस्थानी, मैथिली जैसी लिपियाँ विकसित है।

नागरी नाम

प्राचीन नागरी से सोलहवीं सदी में आधुनिक नागरी विकसित हुई। इसके नागरी नाम पडने की बात को लेकर विद्वानों में मतभेद हैं।

1. गुजरात के नागर ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त होने के कारण इसका नाम नागरी हुआ।
2. प्रमुख रूप से नगरों में प्रचलित होने के कारण इसका नाम नागरी पडा।
3. कुछ विद्वानों के अनुसार बौद्ध ग्रन्थ, 'ललित विस्तार' में वर्णित नाग लिपि ही नागरी लिपि है। देवनागर में अर्थात् काशी में प्रचार के कारण इसे देवनागरी कहलाई।

नागरी का विकास

नागरी लिपि के हज़ार वर्षों की जीवन काल में अनेक प्रकार के परिवर्तन आये है। इन परिवर्तनों के अतिरिक्त उनमें अनेक प्रकार के प्रभाव भी पडे है। सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव फारसी लिपि का है। नागरी लिपि पर मराठी लिपि का भी कुछ प्रभाव पडा है।

'ल्' के स्थान पर 'ळ' का प्रयोग मराठी का प्रभाव स्वरूप है। कुछ लोक नागरी लिपि शिरोरेखा के बिना लिखते है।

अंग्रेज़ी के विराम चिह्नों ने भी नागरी को बहुत अधिक प्रभावित किया है। पूर्ण विराम को छोडकर सभी चिह्न अंग्रेज़ी से लिये है। इस प्रकार फारसी, मराठी, गुजराती, अंग्रेज़ी आदि ने भी नागरी लिपि को प्रभावित किया।

देवनागरी की वैज्ञानिकता

1. उसमें उच्चारण और लेखन में एक रूपता है। जितनी ध्वनियाँ होते है उतने लिपि चिह्न है। देवनागरी में जैसा बोला जाता है वैसा लिखा जाता है।
2. एक ध्वनि के लिए एक ही लिपि संकेत होने के कारण उच्चारण और लेखन में किसी प्रकार की विसंगति नहीं होते।

उदाः- a) अंग्रेज़ी में c, q, k, तीन लिपि चिह्न है और उच्चरित ध्वनि 'कं' एक ही है।

b) cat- केट, kite - काइट। जब कि हिन्दी में 'क' लिपि चिह्न एक ही, 'क' ध्वनि का बोधक है।

3 एक वैज्ञानिक आदर्श लिपि में समग्र ध्वनि को अंकित करने की क्षमता होती चाहिए। देवनागरी लिपि में यह गुण अन्य लिपियों की तुलना में अधिक है।

4. लिपि की वैज्ञानिकता के एक आधार सुपाठ्यता है। पढते समय किसी भी प्रकार की संदि्ग्धता या संदेह की स्थिति देवनागरी लिपि में नहीं।
5. सुन्दरता भी वैज्ञानिक लिपि का एक आवश्यक गुण है। देवनागरी सुन्दर है। शिरोरेखा विहीन रूप उतना सुन्दर नहीं, अतः शिरोरेखा लगनी चाहिए।

6. यान्त्रिक सौन्दर्य यान्त्रिक सुविधा, तथा मुद्रण की सुविधा किसी भी लिपि को छापने में सरल और कम खर्चीली होनी चाहिए। ढंकण और मुद्रण में लिपि जितनी सरल सुविधा जनक होगी वह उतनी ही अधिक उपयोगी होगी। देवनागरी में टंकण तो सरल है, लेकिन मुद्रण तो खर्चीला है, क्योंकि उसमें अनेक मनज़िले होती है, जैसे 'के', कृष्णा, किताब कीटा आदि।

7. लिखने में जलदी लिपि का एक आवश्यक गुण है। आशुलेखन की दृष्टि से भी लिपि अनुकूल होती चाहिए।

देवनागरी में आंशु लेखन की क्षमता पर्याप्त है। उस प्रकार एक वैज्ञानिक लिपि है देवनागरी। फिर भी इसकी कुछ त्रुटियाँ है। भोलानाथ तिवारी ने इस लिपि की कुछ कमियों की ओर निर्देश दिया है।

- एक ही ध्वनि के लिए चार लिपि चिह्नों के कारण कठिनाई होती है; जैसे रमेश, कार्य, कृष्ण और पत्र। इन चार शब्दों में क्रमशः आगे, ऊपर, नीचे और अन्त में 'र्' ध्वनि है। याने र, ^ >। ध्वनि केलिए एक लिपि चिह्नवाले सिद्धान्त के अनुरुप नहीं है।
- देवनागरी लिपि में सभी भाषाओं की ध्वनियों को अंकित करने की क्षमता नहीं हैं। अतः विभिन्न भाषाओं की विशिष्ट ध्वनियों के लिए इसमें कुछ लिपि चिह्न जोडने पडेंगे।
- जिस क्रम से ध्वनियाँ उच्चरित हो उसी क्रम से अंकित की जानी चाहिए। देवनागरी में सर्वत्र ऐसा नहीं होता।
- मात्राएँ, आगे, पीछे, ऊपर और जोडी जाती है। इसके कारण ध्वनियों के उच्चारण और उसी क्रम में अंकन का नियम टूट जाता है।
- दो वर्णों की बनावट एक सी था भ्रम में डालनेवाली नहीं होनी चाहिए। जैसे, ख, रव, भ, म. घ, ध
- संयुक्त व्यंजन भी नागरी में स्वतंत्र अक्षर जैसे है। त्र, क्ष, ज्ञ, श्र आदि। इसे संयुक्त रुप में ही लिखना चाहिए।
- देवनागरी में अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु, शिरोरेखा और नुक्ता के संबन्ध में को◌ी एक नियम नियम है।

इन त्रुटि निवारण केलिए भारत सरकार ने अनेक समितियाँ बनायी और समय समय पर उसमें संशोधन किया। उसे अधिकतम सरल एवं उपयोगी बनाने के लिए परिवर्तन भी किया। केन्द्रीय हिन्दी निर्दशालय ने देवनागरी लिपि को राष्ट्रीय लिपि की दृष्टि से थोडा संशोधित किया।

नागरी लिपि में सुधार- संशोधन

सर्वप्रथम महाराष्ट्र में सवर्कर बन्धुओं ने स्वरों के लिए 'अ' की बारहखडी तैयार की अर्थात् 'अ' पर व्यजनों के समान ही स्वरों की मात्राएँ लगाई गई। यथा 'अ', 'आ', अि, अी, अु, अू आदि मराठी समाचार पत्रों ने इसे अपनाया। लेकिन यह सुधार देश व्यापी न हो सका।

सन् 1935 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इन्टोर अधिवेशन में राष्ट्रपिता गाँधी के सथापतित्व में नागरी लिपि सुधार समिति बनायी गयी। इसके संयोजक, काका कलेलकर थे। समिति ने अनेक सुझाव दिये। इसमे मुख्य है।

1. लिखने में शिरोरेखा लगाना आवश्यक नहीं है। छप्पाई में शिरोरेखा का नियम बना रहे।

2. प्रत्येक वर्ण ध्वनि को उच्चारण क्रम से ही लिखा जाया जैसे- बेर-बेर, बैर-बैर, बौर-बौर

क) 'इ' की मात्रा बा ओर लगायी जाय।

ख) 'ए', ऐ, ओ, औ की मात्राएँ वर्ण के ठीक ऊपर न लगाकर दाहिनी ओर कुछ हटाकर लगाई जाए।

ग) यदि संयुक्त व्यंजनों में पूर्व व्यंजन 'रे' है तो व्यंजन के ऊपर न लगाकर दाएँ ओर हटाकर लिखा जाय।

जैसे – धर्म

उसी प्रकार 'ऊ', ऊ, ऋ, की मात्राएँ ठीक नीचे लगाकर कुछ हटाकर दाहिनी ओर लगायी जाये जैसे-कुरूप, फूल, कुटिल, आदि।

घ) अनुसार और अनुनासिक के चिह्न क्रमश और हो वे पूर्ण रूप से न लगाकर दाहिनी ओर कुछ हटाकर लगाये जाये।

जैसे- अंश, फँसना

ङ) संयुक्त व्यंजन में यदि पर व्यंजन 'रै' हो तो 'र' को पूरा लिखा जाय।

जैसे- 'प्रे' के लिए 'प्रे', 'त्रे' के लिए 'त्रे' आदि।

3. स्वरों और व्यंजनों में समानता लाने के लिए सवंर्कर की भाँति 'अ' की बारहखडी क जाय।

4. यदि क, ख, ग, ङ, ढ, ज, फ, य, च। व्यंजनों के नीचे बिन्दु लगाया जाए। तो इसका मतलब है, क, ख, आदि अर्ध जिह्वा वीन, ङ, ढ़ आदि उत्क्षिप्त, ज, य, फ संघर्षों और च मराठी है।

5. विराम पूर्ववत रहे। पूर्ण विराम का चिह्न- 1. हो

6. ख के स्थान पर गुजराती ख लिखा जाया।

7. गुजराती, मराठी तथा दक्षिणी भाषाओं के 'ल' केलिए ऴ की चिह्न का उपयोग हो।

8. संयुक्त व्यंजन में पूर्व व्यंजन होने की अवस्था में खडीपाई युक्त व्यंजनों की पाई हटाकर संयोज्य रूप बनाया जाय। जैसे, ख्, ग्, ध् आदि। 'क', 'फ', 'के' संयोज्य रूप क्, फ् हो। शेष व्यंजनों का जिनमें खडीपाई नहीं संयोज्य रूप उन व्यंजनों के आगे एक लकीर रखकर प्रकट किये जाय-जैसे विद्या, बुड्ढा।

9. घ़ और म का ध और भ से अलग करने केलिए ध और भ पर घुंटियाँ लगाई जाय।

जैसे- ध, भ।

10. अंकों का स्वरूप इस प्रकार हो- १,२,३,४,५,६,७,८,९

इन सुझाओं को राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा ने तो व्यावहारिक रूप दिया। किन्तु हिन्दी साहित्य सम्मेलन और काश्मीर नागरी प्रचार सभा ने इसका विरोध किया।

सन् 1945 में काशी नागरी प्रचरिणी सभा ने स्वयं लिपि सुधार संबन्धी सुझाव माँगे। केवल श्रीनिवासदान के ही सुझाव स्वीकार किये। लेकिन उनमें भी कुछ दोष थे। उन्होंने अनेक वर्णों के रूप विकृत कर दिये थे। 'अ' की बारह खडी करने की बात उन्होंने अवैज्ञानिक माना और स्वीकार नहीं की। उन्होंने अल्पप्राण पर ही 'ह्' चिह्न लगाकर महाप्राण बनाने की बात कही थी।

सन् 1947 में उत्तरप्रदेश सरकार ने आचार्य नरेंद्र देव की अध्यक्षता में एक समिति बनाई। सन् 1948 में केन्द्रीय सरकार द्वारा संस्थापित हिन्तुस्तानी शीघ्र लिपि तथा लेखन चन्त समिति से विमार विमर्श करने के पश्चात् नरेन्द्रदेव समिति ने सुझाव प्रस्तुत किये। ये निम्नलिखित है।

1. मुद्रण और टंकण की सुविधा के लिए मात्रायें, अनुस्वार अर्द्धचन्द्र तथा अपने वर्तमान स्थान से कुछ दाहिनी ओर हटाकर लगाये जाए।
2. अनुस्वार के स्थान पर शून्य और अर्द्धचन्द्र के स्थान पर बिन्दु लगाया जाय तथा, ङ, ञ, ण, न, म के स्थान पर जहाँ प्रतिकूलता (वाङ्मय, तन्मय) नहीं वहाँ बिन्दु लगाया जाय जैसे- हंस, अंत, गाँव।
3. शिरोरेखा लगाई जाय।
4. जिन व्यंजनों पर पाई हो उनका संयोज्य रूप पाई हटाकर बनाया जाय-

   जैसे- ग्म (वाग्मी) 1 क और फ के संयुक्त रूप पूर्ववत हो। (वक्त)
5. जिन व्यंजनों में पाई नही उनका संयोग्य रूप पहले व्यंजन के नीचे हल चिह्न लगाकर लिखा जाया।

   जैसे- विद्या, चिट्ठी आदि।

   उन्होंने वर्ण संबन्धी में सुझाव दिये है।

1. अ, प, झ, भ, श, --, ण, ए आदि दो रूपवाले ध्वनियों से केवल एक रूप अ, झ, श, ण को ही अपनाया जाय।
2. र की मात्रा का रूप दाहिनी ओर हो जैसे दीन-दीन
3. क्ष, त्र के स्थान पर वक्ष और त्र लिखा जाय।

4. अंकों का रूप पूर्ववत रहे।

5. केवल पूर्ण विराम का चिह्न खडीपाई स्वीकार किया जाय। शेष सब अंग्रेज़ी के जैसे रहे।

6. घ, ध, भ, म के भ्रम मिटाने केलिए ध और भ को घुंटीदार बनाया जाय (ध, भ)

इनमें कई सुधार काका कल्लेकर समिति ने पहले ही दिये थे। नरेन्द्र समिति ने अत्यन्त आवश्यक सुधारों को अपनाया।

नरेन्द्र देव समिति के पश्चात उत्तर प्रदेश सरकार ने विभिन्न राज्यों के प्रधान मन्त्रियों तथा विज्ञानों की एक सभा बुलाई। इस सभा ने कुछ परिवर्तों के साथ नरेन्द्र देव समिति के सुझाव स्वीकार कर लिया। 'ख्र' के स्थान पर गुजराती 'ख्र' को स्वीकार किया। केलिए क्ष प्रयुक्त करने की रीति अपनायी। 'इ' की मात्रा दाहिनी ओर पाई को आधा करके दिखाने की रीति अपनायी। उत्तर प्रदेश में कई पुस्तकें भी इस लिपि में छपी। लेकिन 'इ' की मात्रा में जो परिवर्तन किया गया उससे 'इ' और इ की मात्राओं का अन्तर बहुत कम रखने से अस्पष्टता उत्पन्न हो गई। अतः प्राचीन रूप ही स्वीकार कर लिया गया है। मशीनों के आविष्कार देवनागरी लिपि को मशीनों के अनुकूल बनाने केलिए स्वंय प्रयत्नशील है।

मराठी आदि कई भाषाओं केलिए देवनागिरी लिपि ही प्रयुक्त होती है। यही लिपि कुछ अन्तर के साथ बंगालि, असमिया, गुरुमुख्री और गुजराती है। भारत का समस्त प्राचीन वाङ्मय देवनागिरी लिपि में है। इस प्रकार देवनागिरी को संपूर्ण भारत की एक मात्रा लिपि स्वीकार करना राष्टीय एकता के होने में और प्रान्तीय भाषाओं के विकास के हित में है।